चतुर्थ अध्याय

चतुर्थ अध्याय

'हिंदी के विवेच्य ग्रामांचलिक उपन्यासों में चित्रित सांप्रदायिकता'

प्रस्तावना :–

'सांप्रदायिकता' एक विषैला वृक्ष है जिस के साये में आनेवाला हर व्यक्ति धर्मांध होकर सुख और अमन को बेचिराख कर देता है। भिन्न धर्म के मूलतत्त्वों की आपस की टकराहट 'सांप्रदायिकता' को जन्म देती है। 'सांप्रदायिकता' के इस भयावह तांडव में झुलस जाता है; आम आदमी और उसका घर। बरसों से बसे खुशहाल गाँव और ग्राम–जीवन को उजाडने का कार्य समाज के कुछ स्वार्थी तत्त्व कर रहे हैं। गाँव की खुशहाल जिंदगी में सांप्रदायिकता का विषैला जहर फैल गया है। प्रत्येक व्यक्ति संदेह तथा तनावग्रस्त माहौल में जी रहा है, न जाने वह कब इस 'सांप्रदायिकता' का शिकार बन जाए। 'सांप्रदायिकता' ने समाज में घुटन भरा माहौल बनाया है जिससे प्रत्येक भारतीय व्यक्ति प्रभावित हो रहा है।

'सांप्रदायिकता' की संकल्पना की गहराई में जाने से ज्ञात होता है कि भारत में इसकी मूल जड़ें 'भारत–पाक' विभाजन से जूडी है। 'भारत–पाक विखंडन' वह त्रासदी है, जिसने मानव के उस घिनौने रूप को दिखाया, जिसके उदाहरण इतिहास में कम ही देखने को मिलते हैं। बरसों की गुलामी से मुक्त हुए लोगों ने स्वतंत्रता पर लांछन लगाया। सांप्रदायिक दंगों में मनुष्य का संवेदनाहीन होना मानो सांस्कृतिक एवं सामाजिक संकट का संकेत है। अँग्रेजी हुकूमत की कूटनीति और राजनेताओं के आपसी मतभेद से भारत विखंडन तो हुआ लेकिन उसके बाद के नरसंहार को रोकना कठिन बना। सांप्रदायिक दंगों की भयवहता ने अनेक सामाजिक समस्याओं को न्यौता दिया जिसने नव-भारत के विकास मार्ग में अवरोध निर्माण किया।

'भारत–विभाजन' और उसके बाद देश के संवेदनशील इलाकों में भडके हिंदू–मुस्लिमों के दंगों में हुआ नरसंहार, उससे निर्मित दुष्परिणामों ने स्वतंत्र भारत को

अंदर से हिला दिया। सांप्रदायिकता के शिकंजों से छुटकारा पाने के लिए प्रत्येक भारतीय नागरिक छटपटा रहे हैं। भारत–विभाजन से भडके सांप्रदायिक दंगें और दंगों में व्यक्त मानवता का बर्बर रूप साहित्य का विषय बना। 'झूठा सच', 'तमस' जैसी सशक्त औपन्यासिक रचनाओं में भारत–विभाजन के दर्द को बखूबी स्पष्ट किया है। भारत विभाजन से हिंदू–मुस्लिमों के पारंपारिक वैमनस्य में बढ़ोतरी हुई परिणाम स्परूप 20 वीं सदी के अंतिम दशक तक सांप्रदायिक दंगों के केंद्र में भारत–विभाजन का दर्द दृष्टिगोचर होता है।

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी औपन्यासिक कृतियों में भारत–विभाजन की घटना का प्रभावपूर्ण वर्णन है। सांप्रदायिक त्रासदी से प्रभावित साहित्यकारों ने इसका सजीव वर्णन अपने कृतियों में किया है। 'भारत-विभाजन' की घटना का साहित्यिक सफर 20 वीं सदी के अंतिम दशक तक के उपन्यासों में गतिमान है। अतः चतुर्थ अध्याय के अंतर्गत भारत–विभाजन के कारण सांप्रदयिकता में हुई बढ़ोतरी, जातीय एवं धार्मिक तनावों के कारण भडके कौमी दंगें, सांप्रदायिकता के सामाजिक दुष्परिणाम और उससे निजात पाने के उपाय आदि का विवेचन करके 'डूब', 'इदन्नमम' और 'मुखड़ा क्या देखे' इन उपन्यासों में चित्रित सांप्रदायिकता को स्पष्ट करने का प्रयास इस लघुशोध–प्रबंध में किया गया है।

4.1. हिंदुस्थान के बँटवारे के कारण सांप्रदायिकता को मिली बढ़ोतरी :–

'हिंदुस्थान का बँटवार' भारतीय इतिहास की एक हृदयद्रावक घटना है, जिसने भारत की आजादी की खुशी को मातम में बदल डाला। स्वतंत्रता की वेदी पर भाई–भाईयों ने खून की होली खेलकर मानवता का ही गला घोट दिया। स्वतंत्रता पूर्व काल में सामाजिक सद्भाव और सौहार्दपूर्ण माहौल में रहनेवाले हिंदू–मुस्लिम बँटवारे के बाद एक–दूसरे के खून के प्यासे बन गए। स्वाधीनता संग्राम में कंधों से कंधा मिलाकर अँग्रेजी हुकूमत के खिलाफ लड़नेवाले हिंदू–मुस्लिम विभाजन के बाद हमेशा के लिए सरहद्दों में विभाजित हुए। सामाजिक भाईचारा तथा सांस्कृतिक एकता को भारत के बँटवारे ने विखंडित कर डाला। डॉ. प्रमिला अग्रवाल के मतानुसार –"एकता हमारे स्वाधीनता संघर्ष की धुरी थी, किंतु देश विभाजन ने एकता की नींव हिल गई। अहिंसा हमारा मूलमंत्र था, किंतु विभाजन के फलस्वरूप देश में हिंसा का ऐसा भयानक नृत्य हुआ कि शैतान की क्रूरता भी उसके सामने फीकी पड गई।"[1]

प्रत्यक्ष भारत–पाक विभाजन होने के बाद सांप्रदायिक उन्माद चरम सीमा पर पहुँच गया। जहाँ देखो वहाँ लूट, हत्या, आगजनी, खून–खराबा, बलात्कार आदि पाशवी कृत्यों ने इन्सानियत को खत्म कर दिया। राजनेताओं की धूर्त राजनीति के शिकार हुए आम आदमी 'सांप्रदायिकता' के उन्माद में पशु बन गए जिन्हें केवल विधर्मियों के खून की प्यास थी। बँटवारे के कारण संवेदनशील क्षेत्रों के गाँव–गाँव, शहर–शहर में सांप्रदायिक उन्माद चरम सीमा पर था। इस विषय के संदर्भ में समीक्षक ज्ञानचंद गुप्ता लिखते हैं –"क्या शहर तथा क्या गाँव सभी सांप्रदायिकता की वैतरणी में डूब गए। गाँव की सांप्रदायिकता, उनकी सामूहिकता के विघटन और उन में कटुता के प्रसार का दोष देश विभाजन को जाता है।"[2] विभाजन ने संवेदनशील इलाकों में नरक का माहौल बनाया।

हिंदुस्थान के बँटवारे के बाद भडके सांप्रदायिक दंगों ने हिंदू–मुस्लिम कौमों को हमेशा के लिए विखंडित कर दिया। केवल दो देश ही सरहद्दों में विभाजित नहीं हुए, ये सरहद्दें दोनों कौमों के मनों को भी विखंडित कर गई। स्वातंत्र्योत्तर काल से लेकर वर्तमान समय तक छिडे हिंदू–मुस्लिमों के सांप्रदायिक दंगों की नसें हिंदुस्थान के बँटवारे से जुड़ी है। इसी कारण किसी भी संवेदनशील बातों पर दोनों कौमों का भडकना विभाजन की देन है।

भारत–पाक विभाजन के बाद हिंदू–मुस्लिम, शीख–मुस्लिम एक दूसरे के कट्टर शत्रू बने। इस सांप्रदायिक तांडव को बँटवारा ही जिम्मेदार है जिसकी वजह से भारत का सामाजिक माहौल हमेशा तनावग्रस्त बना रहा। इस घटना की भीषणता को स्पष्ट करते हुए पत्रकार प्रदीप देशपांडे लिखते हैं –"विभाजन होते ही चित्र बदल गया। निरंतर छः सप्ताह चल रहे दंगों के हिंसाचार ने करीब पाँच–लाख नागरिकों की बलि ली। करीब पचपन लाख लागों को जबरदस्ती से अपने गाँवों से स्थलांतरित करवाया गया। शरणार्थियों के झूंड इधर-से-उधर जाने लगे। खून, लूट, आगजनी और बलात्कार से पूरा उत्तरी विभाग जल रहा था।"[3] यह केवल भारत का बँटवारा नहीं अपितु भारतियों का बँटवारा था।

'भारत–विभाजन' के कारण पूरे भारत में सांप्रदायिक दंगें भडक उठे और साथ ही पाकिस्तान और बांग्लादेश जैसे पडोसी देशों में भी धर्मवाद का सांप्रदायिक उद्रेक देखने मिला। बँटवारे की पीड़ा का प्रतिशोध लेने के हेतु से भारत–पाकिस्तान के बीच कई बार युद्ध हुए जिसमें भारत ने पाकिस्तान की इस हीन मानसिकता का

मुँहतोड जवाब दिया है। वर्तमान समय में मुंबई पर हुये आतंकवादी हमलें भारत–पाक विभाजन के प्रतिशोधी मानसिकता का ही प्रौढ़ रूप है। आज भी संवेदनशील इलकों में बँटवारे की पीड़ा का उद्रेक होता है और सांप्रदायिकता का जन्म होता है। हिंदुस्थान के बँटवारे से हिंदू–मुस्लिमों के बीच की दूरियाँ इतनी बढ गयी जिसको पाटने कार्य आज भी हो रहा है।

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत और पाकिस्तान के बीच हुए युद्ध, मुंबई में हुए बमविस्फोट, अयोध्या में मंदिर–मस्जिद विवाद का उग्र रूप, कश्मीर सीमा में आतंकवादी वारदातें, अक्षरधाम मंदिर तथा भारतीय संसद पर हुआ आतंकवादी हमला, गुजरात का गोध्रा–हत्याकांड आदि सांप्रदायिक घटनाओं की उग्रता के मूल में हिंदुस्थान के बँटवारे की पीड़ा का दर्द है। धर्म–विवाद के इतिहास में सन् 1946–47 यह कालाखंड आत्यधिक भयावह, परस्पर–विद्वेष का कालखंड है। सांप्रदायिक दंगों की भीषणता ने मानवी सभ्यता के सामने संकट पैदा किए हैं। बँटवारे ने ही भारत के सांप्रदायिक सद्भाव में फूट डालने का कार्य किया है जिसमें मानवीय दृष्टिकोण की अपेक्षा हिंस्र पशुता को बढावा मिल रहा है। इस विषय में भविष्य के खतरे से अगाह करते हुए उपन्यासकार रामानंद सागर लिखते हैं –"लोगों यह फिक्र है कि हिंदू मर रहे हैं, मुसलमान मर रहा है, और मुझे गम है कि हिंदुस्तान मर रहा है, मानवता मर रही है और वह सभ्य भावनाएँ मर रही है, जो सहस्त्रों सालों के विकास के बाद मनुष्य ने पैदा की थी।"[4]

* निष्कर्ष :–

अतः स्पष्ट है कि 'भारत–विभाजन' एक ऐसी त्रासदी है जिसके परिणाम हम आज भी भूगत रहे हैं। हिंदुस्थान के बँटवारे ने स्वातंत्र्योत्तर सांप्रदायिक परिवेश को हमेशा ऊर्जा प्रदान करने का काम किया है जिससे सांप्रदायिक दंगों में हमेशा बढ़ोतरी हुई है। हिंदुस्थान के बँटवारे के कारण हिंदू–मुस्लिम कौमों का भी बँटवारा हुआ जिससे सरहद्दों का निर्माण हुआ। ये सरहद्दें देशों की सीमा के साथ दोनों कौमों के दिलों में भी बनी है जिसको खत्म करना चुनौती काम है। अतः हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिक दंगों की नीव 'हिंदुस्थान का बँटवारा' है।

4.2. भारत में हुए विविध सांप्रदायिक दंगें :–

भारत एक बहुभाषिक तथा बहु धार्मिक देश हैं। हजारों सालों से यहाँ विभिन्न धर्म, जाति, वंश के लोग रहते आए हैं। हर एक को अपना मजहब, अपना धर्म,

अपनी भाषा, अपनी जाति तथा अपना संप्रदाय प्राणों से भी अधिक प्रिय है। धर्मों–धर्मों के बीच अथवा दो भिन्न संप्रदायों के मूलतत्त्वों की आपसी टकराहट धार्मिक उन्माद को जन्म देती है जिसका नाम है – 'सांप्रदायिकता'। विगत पाँच दशकों के भारतीय इतिहास में विभिन्न सांप्रदायिक दंगें हुए। धर्म के उन्मादी विष ने भारत को अनेक बार 'सांप्रदायिकता' की खाई में धकेला है। सच्चिदानंद सिंह के मतानुसार –"सांप्रदायिक शक्तियाँ अक्सर लोगों की धार्मिक भावनाओं को उभारती है, इसलिए यह भ्रम पैदा होता है कि सांप्रदायिकता धार्मिक भावनाओं की तीव्र अभिव्यक्ति है लेकिन यह एक भ्रम ही है। असल में यही वह भ्रम है, जिससे सांप्रदायिक शक्तियों को बल मिलता है।"[5] जिससे सांप्रदायिक दंगें–फसाद भडक उठते हैं।

स्वातंत्र्योत्तर काल से 20 वीं सदी के अंतिम दशक तक भारत का सांप्रदायिक माहौल महेशा उग्र बना है। देश में अनेक संवेदनशील इलाकों में धर्म की तीव्र अभिव्यक्ति के कारण कौमी दंगें भडके हैं। कभी धर्म के कारण, कभी जाति के कारण तो कभी महापुरूषों की हत्याओं के कारण, कभी आरक्षण–नीति के कारण सांप्रदायिक दंगें हुए। भारत –पाक विभाजन के कारण भडके कौमी दंगें, गांधी हत्या के बाद भडके सांप्रदायिक दंगे, कश्मीर सीमा–विवाद, शहाबानों तलाक प्रकरण पर उभरा सांप्रदायिक तनाव, शिख विरोधी सांप्रदायिक उपद्रव, अयोध्या के मंदिर–मस्जिद विवाद के कारण देश में भडके सांप्रदायिक दंगें,मुंम्बई विस्फोट के कारण भडके सांप्रदायिक दंगें, भारत के संसद पर हुआ आतंकवादी हमला, अक्षर-धाम मंदिर पर हुआ आतंकवादी हमला तथा 26 नवम्बर, 2008 को मुंबई पर हुए आतंकवादी हमलें आदि सांप्रदायिक वारदातों के कारण विगत पाँच दशकों में भारत का सामाजिक माहौल हमेशा गर्म होता रहा है।

भारत–पाक विभाजन के तुरंत बाद कलकत्ता, नोआखाली, बिहार–पंजाब, सिंध प्रांत, बम्बई आदि इलाकों में भीषण सांप्रदायिक दंगें भडक उठे। सन् 15 अगस्त, 1947 की रात भारतीय इतिहास में काली रात बन गई। संवेदनशील इलाकों में खून की नदियाँ बह रही थी। लाशों से भरी रेलगाडियाँ, खून से बह रहे रेल के डिब्बे, आगजनी, विवश नारियों के साथ दुर्व्यवहार और उनकी हत्या आदि से वातावरण भयानक बन गया था। इन दंगों की भीषणता को व्यक्त करते हुए डॉ. प्रा. सुभाष दुरूगकर लिखते हैं – "सन् 15 जून, 1947 से अप्रैल,1948 तक सारे देश में विशेषतः पंजाब में क्रूरता का नंगानाच चल रहा था। 13, 14 और 15 जुलाई के तीन दिन

पंजाब के इतिहास में रक्त लांछित दिन के रूप में पहचाने जाते हैं। इन दिनों पंजाब में जो नरसंहार हुआ, औरतों पर जो अत्याचार हुए उसे दुनिया के इतिहास में जोड़ नहीं।"[6] गांधीजी ने संवेदनशील इलाकों में जाकर लोगों को समझाया और आखिरकार आमरण अनशन का संकल्प किया। धीरे–धीरे स्थिति में सुधार हुआ और कौमी दंगें शांत हुए।

गांधीजी के अनशन के नैतिक प्रभाव के कारण हिंदू–मुस्लिमों के कौमी दंगें शांत हुए। गांधी तथा गांधीवाद के बढ़ते प्रभाव के कारण हिंदू राष्ट्रवादी लोगों का 'संपूर्ण हिंदुराष्ट्र' बनाने के सपने का मोहभंग हुआ और उन्होंने महात्मा गांधी पर अपना रोष उगल दिया। एक जहाल राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ के कार्यकर्ता नथुराम गोडसे ने 30 जनवरी, 1948 को प्रार्थना सभा में गांधीजी की हत्या की। जिस महात्मा ने आजीवन देश सेवा का व्रत लिया, उसी महापुरूष की सांप्रदायिक उन्माद ने बलि ली जिससे गांधीवादी कार्यकर्ताओं ने संपूर्ण देश में सांप्रदायिक माहौल को उग्र बनाया।

सन् 1981 में तमिलनाड़ में स्थित मीनाक्षीपुरम् में 1300 दलितों ने धर्मांतर करके मुस्लिम धर्म का स्वीकार किया जिससे हिंदू धर्म को धक्का पहुँचा। तमिलनाड़ के अनेक जगहों पर दलितों के खिलाफ सांप्रदायिक दंगें छिड गए। साथ ही सन् 1983 में सिंहली–तमिलों के बीच निर्माण हुए वांशिक भेद ने अनेक सांप्रदायिक दंगों को जन्म दिया।

सन् 1983 में सीख धर्म के उग्रवादियों ने स्वतंत्र खलिस्तान की माँग की। देश की तत्कालीन सरकार ने उग्रवादियों खिलाफ सैन्य-कार्रवाई की जिसमें अकाल तख्त की इमारत टूट गई। प्रक्षुब्ध शीख–जनमानस ने तत्कालीन सरकार के खिलाफ उग्र प्रदर्शन किए जिसके तहत तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी के अंगरक्षकों ने उनकी हत्या की। इस हत्या के विरोध में सीख समुदायों के खिलाफ भयानक उपद्रव हुए, जिनमें अनेक निर्दोष सीख मारे गए। करोडों की संपत्ति नष्ट हुई।

सन् 1980 में पिछडी जाति को विकास मार्ग में लाने के लिए 'मंडल कमिशन' गठित किया गया। इससे देश में अनेक जगहों पर दंगें छिड गए। डॉ. राम काले के मतानुसार –"सन् 1979 में 'मंडल कमिशन' गठित किया गया। उन्होंने 1980 में अपना अहवाल पेश किया वह भी दस साल धूल में पडा रहा। अनेक सरकारें बदली और प्रधानमंत्री व्ही. पी. सिंग ने 'मंडल कमिशन' का अहवाल अंमल में लाने का निर्णय

लिया। इस पर बहुत तनाव उत्पन्न हुआ देश के विभिन्न भागों में दंगें, आगजनी, आत्मदहन जैसी दुःखद घटनाएँ घटित हुई।»[7] स्पष्ट है जातीवादी मानसिकता ने 'मंडल कमिशन' का तीव्र विरोध किया। आरक्षण-नीति सवर्णों को रास नहीं आई और उन्होंने निम्न जातीयों के खिलाफ सांप्रदायिक तनावों को बढावा दिया।

सन् 1986 में शहाबानो तलाक के संबंध में भारतीय परिवेश में हिंदू-मुस्लिमों के बीच माहौल गर्म हुआ। मुस्लिम धर्मवादियों ने न्यायालय के निर्णय का इन्कार किया। मुस्लिम धर्म में हस्तक्षेप की संकुचित मनोवृत्ति के कारण मुस्लिमों के बीच वैमनस्य की भावना पैदा हुई। उच्च न्यायालय ने शहाबानो के पक्ष में फैसला दिया। इसके कारण देश में सांप्रदायिक तनाव का निर्माण हुआ।

शहाबानों तलाक संबंध में उच्च न्यायालय द्वारा दिये गए फैसल में तत्कालीन सरकार ने हस्तक्षेप किया जिसके कारण हिंदू जन-मानस उद्वेलित हो उठा। 'हिंदू वोट-बैंक' बचाने के लिए तत्कालीन सरकार ने सन् 1986 में 'पूजा विधेयक' पारित किया और वही से अयोध्या में मंदिर-मस्जिद विवाद ने जोर पकडा जिसका भारतीय सामाजिक तथा राजनीतिक स्थिति पर गहरा प्रभाव पडा। सन् 1989 में शिला-न्यास किया गया और 6 दिसम्बर, 1992 में प्रत्यक्ष बाबरी मस्जिद ढहाने के कार्य को अंजाम दिया गया। इस प्रभावकारी घटना से अयोध्या के साथ देश के अनेक इलाकों में हिंदू-मुस्लिमों के बीच सांप्रदायिक जंग छीड़ गई। बाबरी मस्जिद के विध्वंस होने की खबर से मुस्लिम समाज पर आघात हुआ। अयोध्या में मुस्लिमों के खिलाफ सांप्रदायिक उन्माद भडक उठा, जिसमें अनेक निरपराधी नागरिक मारे गए। बाबरी कांड के कारण समस्त देश के संवेदनशील इलाकों में मृत्यु का तांडव हुआ। प्रदीप देशपांडे के मतानुसार -"भारत के अनेक औद्योगिक शहरों में धार्मिक दंगें छिड गये। सामाजिक तनाव महसूस हुआ। मुंबई, सुरत, भोपाल और अयोध्या में भीषण दंगें हुए। पहले अफवाहें बाद में दंगे-हिंसाचार आदि योजनाओं का कार्यान्वयन हुआ।»[8] इस हिंसा ने भारत-विभाजन की दुःखद स्मृतियों को उजागर किया।

'बाबरी कांड' के बाद भडके कौमी दंगों में सुरत, भोपाल के 500 लोगों की मौत हुई। महिलाओं पर अत्याचार किया गया। घरों को जलाकर तबाह किया गया। बाबरी कांड के पश्चात् उत्पन्न सांप्रदायिक तांडव शांत होने के पूर्व ही प्रत्युत्तर में 13 मार्च, 1993 में 12 बम विस्फोटों की शृंखला ने मुंबई को दहेला दिया। प्रदीप देशपांडे के मतानुसार -"13 मार्च, 1993 के दिन मुंबई हिल गई। पटाखों की तरह 12 बम्ब

विस्फोट हुए। यह विस्फोट स्टॉक एक्सचेंज, एअर–इंडिया, सी–रॉक हॉटेल, शिवाजी पार्क, प्लाझा सिनेमा, वरळी आदि स्थानों पर हुए। कुल 15 जगहों कार, स्कुटर में रखे गए बमों में से 12 विस्फोट हुए। इस विस्फोट से 257 नागरिकों की बलि ली, तो कुल 1400 लोग गंभीर रूप से घायल हुए।»[9]मुंबई बम विस्फोट बाबरी कांड का प्रतिशोध लेने की सांप्रदायिक मानसिकता का द्योतक है।

20 वीं सदी के अंतिम दशक तक आते–आते हिंदू–मुस्लिम, शीख–मुस्लिम, सिंहली–तमिल संघर्षों के कारण सांप्रदायिक दंगों में बढ़ोतरी हुई। विभाजन से लेकर वर्तमान समय तक कश्मीर इस सांप्रदायिकता की धधकती आग में झुलस रहा है। मुस्लिम धर्माभिमानी 'जिहाद' के नाम पर कश्मीर की भोली–भाली आवाम को भड़काने का कार्य कर रहे हैं। श्रीनगर, अनंतनाग जैसे संवेदनशील विभागों में आए दिन कौमी दंगें, आतंकवादी हमलें, बम विस्फोटों की वारदातें होती रहती है।

'आतंकवाद' इसी सांप्रदायिकता का प्रौढ रूप है जो सरहद्द पार के देशों की प्रतिशोधी विकृत मानसिकता का परिचायक है। भारतीय संसद पर हुआ हमला, अक्षरधाम मंदिर पर हुआ हमला इसी आतंकवादी कुप्रवृत्ति का रौद्र रूप है।

सन् 27 फरवरी, 2002 में अयोध्या से 'रामलीला पूजा' करके वापिस आ रही साबरमती एक्सप्रेस के पैसेंजर के डिब्बे को लगी आग में 57 दुर्भागी लोगों की मौत हुई। इस घटना के तुरंत बाद गुजरात के गोध्रा में सांप्रदायिक दंगों का तांडव हुआ। मुस्लिमों को केंद्र में रखकर विभिन्न शहरों में सांप्रदायिक दंगें शुरू हो गए। मुस्लिमों के दुकानों, घरों, हॉटेलों, मस्जिदों को ध्वस्त करके करीब 2000 लोगों को मौत के घाट उतारा गया। औरतों पर अत्याचार करके उन्हें आग में झुलसाया गया। अहमदाबाद, वडोदरा और गोध्रा के मुस्लिमों को टारगेट किया गया। इस विषय में प्रदीप देशपांडे लिखते हैं –"गुजरात गोध्राकांड के कारण भारतीय राज्य घटना के संदर्भ में नागरिकों में अविश्वास का माहौल निर्माण हुआ। गोध्रा, गुजरात और अक्षरधाम जैसी अमानवीय हत्याकांडों का मतलब, स्वातंत्र्योत्तर भारत के लोकतंत्र पर किए गए तीव्रतम आघात है।"[10] गोध्रा ने फिर एक बार हिंदू–मूस्लिमों की पुरानी दुश्मनी को नये रूप से सींचा जिसमें अमानवीयता के राक्षस का जन्म हुआ।

* **निष्कर्ष :–**

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि भारत–पाक विभाजन के कारण सांप्रदायिकता का जो उग्र रूप सामने आया वह 20 वीं सदी के अंतिम दशक से लेकर

वर्तमान समय तक सांप्रदायिक दंगों के रुप में निरंतर रहा। हिंदू–मुस्लिमों के पारंपारिक कौमी दंगों से भारत का सामाजिक माहौल हमेशा तनावग्रस्त बना रहा। वांशिक तथा जातीय विवादों ने सांप्रदायिकता को बढ़ावा दिया। आरक्षण नीति से सांप्रदायिकता को नया स्त्रोत मिला। मंदिर–मस्जिद को स्त्रोत बनाकर निर्माण किए गए सांप्रदायिक दंगों से भारतीय इतिहास भरा पडा हैं। 'आतंकवाद' उस इतिहास का साक्षी है जिसने अपनी विकृत मानसिकता के कारण इन्सानियत के सामने संकट पैदा किए हैं। हाली में 26 नवम्बर, 2008 को मुंबई पर हुआ आतंकवादी हमला धर्माभिमानियों के मानसिक रूग्णता का परिचायक है।

4.3. सांप्रदायिकता के जन–जीवन पर होनेवाले दुष्परिणाम :–

विगत पचास सालों में पूरे भारत में 'सांप्रदायिकता' की जड़ें मजबूत बनाने के लिए धर्माभिमानियों ने अनेक कौमी दंगों को जन्म दिया। इस 'सांप्रदायिकता' ने भारतीय लोकतंत्र तथा मानवी मूल्यों के सामने संकट निर्माण किया है। ऊपरी सतह से देखा जाए तो, सांप्रदायिक दंगों का प्रचलन चंद घंटों, चंद दिनों तक रहता है लेकिन इसके दुष्पपरिणाम दीर्घ समय तक प्रशासन यंत्रणा तथा समाज को प्रभावित करते हैं। कुछ धर्मांध, स्वार्थ–लोलुप लोग अपना उल्लू सीधा करने के लिए 'धर्म' का हाथियार के रूप में इस्तेमाल करके 'सांप्रदायिकता' के वैतरणी में समाज को डूबा रहे हैं। इस त्रासदी से आहत होते हैं, आम लोग जिनके सामने रोजी–रोटी का सवाल है। इस संदर्भ में उपन्यासकार रामदरश मिश्र लिखते हैं – "देश विभाजन की उस अग्नि में न सरकार झुलसती है न धर्म के ठेकेदार और न स्वार्थी नेता उसमें निम्नवर्ग ही भस्म होता है। अँग्रेज सरकार भी अपनी कूटनीति में सफल हो जाती है।"[11] 'सांप्रदायिकता' से निर्माण कौमी दंगों और हिंसाचार के अनेक दुष्परिणाम है, जिससे आम इन्सान और समाज बुरी तरह प्रभावित हो चुके हैं। वह दुष्परिणाम इस तरह है –

4.3.1 सांप्रदायिक दंगों में अपरिमित जीवित और वित्तहानि :–

'सांप्रदायिकता' की धधकती आग और हिंसाचार में दोनों समुदायों के उत्पादक जनसंख्या बलि चढ़ती है। इस हिंसाचार में 25–30 साल की आयु के लोग मारे जाते हैं, जिससे समाज की आर्थिक और सांस्कृतिक दृष्टि से भी हानि होती है। विगत पचास सालों में 'सांप्रदायिकता' की बलिवेदी पर लाखों–करोडों निरापराध लोगों की बलि गयी। भारत–विभाजन के कारण भडके दंगों में, अयोध्या के मंदिर–मस्जिद विवाद में, कश्मीर की धधकती सांप्रदयिक आग में तथा आतंकवादियों द्वारा किए गए

बम-विस्फोटों में कई लोग मारे गए हैं। यह जीवित हानि का सिलसिला वर्तमान समय तक जारी है। भारत–विभाजन के पश्चात् भडकी सांप्रदायिक आग में लाखों लोग झुलस गए। ले. सूर्यनारायण रणसुभे के मतानुसार "दिल्ली से मुस्लिमों से खचाखच भरी हुई रेल चलती थी जिससे यात्री कराची पहुँचने मात्र तक लाशों में बदल जाते थे और कराची के हाजारों हिंदू दिल्ली में आते–आते प्रेत में बदल जाते थे।"[12]

सांप्रदायिकता की भडकी आग में विपक्षी लोगों के घरों, दुकानों होटेलों, कारखानों को लक्ष्य बनाया जाता है। इस उन्मादी वातावरण में उन्हें जलाकर बेचिराख किया जाता है। विपक्षी के सरकारी कार्यालयों की मोड़–तोड़ की जाती है। सरकारी बस, रेल गाडियों को आग में झुलसाया जाता है जिससे सरकारी माल का काफी नुकसान होता है। गुजरात में गोध्रा हत्याकांड की एक भीषण दुर्घटना घटी। इस धर्मद्वेषी ज्वालामुखी में करोडों रूपयों के उद्योगों, दुकानों को तबाह किया गया था। होटल, यातायात के वाहन और कपडा उद्योग को प्रमुख लक्ष्य बनाया गया था।

'सांप्रदायिकता' से भडके दंगों को शांत करने तथा हिंसाचार की पुनरावृत्ति न हो इसलिए सरकार को बहुत संपत्ति खर्च करनी पडती हैं। दंगों में सहभागी गुनहगारों को जेल में रखने और उनपर मुकदमा दायर करने के लिए जेल प्रशासन को बहुत पैसा खर्च करना पडता है। दंगों के पूछताछ के लिए गठित विविध कमिशनों पर सरकार के रूपये खर्च होते हैं जिससे देश के विकास प्रकल्पों, कार्यों में रूकावटें निर्माण होती है।

4.3.2 शरणार्थियों की समस्या और नारी विवशता :–

'सांप्रदायिकता' में हुए दंगों में अनेक लोगों के घरों को तबाह किया जाता है। बरसों की मेहनत से बनाए आशियाने को विद्वेष की आग में बेचिराख किया जाता है। जिससे वे दर–दर की ठोकरें खाने के लिए मजबूर हो जाते हैं। शरणार्थियों की समस्या उग्र रूप धारण करती है। भारत के बँटवारे के बाद बनी शरणार्थियों की समस्या को स्पष्ट करते हुए समीक्षक शत्रुघ्न प्रसाद लिखते हैं – "स्वाधीनता के बाद भारत का जन-जीवन समस्याओं से मुक्त नहीं हो सका। विभाजन के बाद भी पश्चिमी पंजाब में भी दंगा उभर आया। लाखों लोग मारे गए। 80-90 लाख लोग शरणार्थी बने। शरणार्थी समस्या विकराल रूप धारण करके स्वाधीन भारत को आकुल करती रही। दंगा, विभाजन, स्वाधीनता और शरणार्थी समस्या ने आज तक देश के इतिहास, भूगोल, संस्कृति और जन–जीवन को बुरी तरह आहत किया। इसका दर्द आज तक हमें

दंशित कर रहा है।"[13] शरणार्थियों के स्थलांतर से अनेक प्रदेशों में आबादी बढ़ी। पानी, रोजगार, आवास जैसी मूलभूत जरूरतों पर दबाव बढता गया। शरणार्थी अपमानीत तथा गरीबी में जीने के लिए मजबूर हो गए। शरणार्थियों की दयनीयता का वर्णन करते हुए ओम प्रकाश शर्मा लिखते हैं –"अपनी मिट्टी से पृथक होकर जी सकना उनके लिए कल्पनातीत है। अपनी जमीन से जुड़े रहने का स्वभाव किंतु रहने लायक माकूल साजो-सामान का न होना एक असहाय पीड़ा को जन्म देता है। वे उस ढोर के समान हो जाते हैं जिसका खूँटा तो उखड़ गया हो किंतु अभ्यासवश स्थान से चिपका रहना चाहते हो।"[14]

'सांप्रदायिकता' की उन्मादी स्थिति में नारी की असहायता का फायदा उठाकर उसे बरबाद किया जाता है। इतिहास साक्षी है कि सांप्रदायिकता से भड़के दंगों में धर्मान्ध लोगों ने विपक्षी समूह की महिलाओं को अपने वासना का शिकार बनाया है। नमिता सिंह के मतानुसार –"भारत–पाकिस्तान विभाजन की त्रासदी का सर्वाधिक शिकार औरतें हुई है। यह केवल हमारे समाज की नहीं संभवतः मानव समाज की त्रासदी है कि किसी भी प्रकार की हिंसा या संघर्ष की भरपाई औरतों पर अत्याचार से की जाती है, संभवतः जहाँ उनका कोई लेना–देना भी नहीं होता।"[15] अनेक औरतों के साथ बलात्कार करके उनकी हत्या की गई। अनेक औरतों ने लोक लाजवश आत्महत्या की तो कुछ परिस्थिति के कुचक्र में फँसकर वेश्या व्यवसाय करने के लिए मजबूर हुई। घर के मुख्य पुरूष के न रहने के कारण अनेक लडकियों के शादी–ब्याह का बोझ घर के बुढ़े लोगों पर आया जिसे उठाने में वे असमर्थ थे। इस विषय में डॉ. आदित्य प्रसाद त्रिपाठी लिखते हैं – "खरी हड्डियों का गरूर अब टूटने लगा। एक–एक घरों में दर्जनों लडकियों ब्याहने को पडी है। पाकिस्तान गए लोगों के बीवी बच्चों का भार बूढ़े बाप के सिर का बोझ बन गया जिसे उठाने की ताकत उनमें कतई नहीं हैं।"[16] खून, लूट–कसौट, आगजनी, बलात्कार से अनेक नारियों का मानसिक संतुलन खो गया। वे नारकीय जीवन जीने के लिए अभिशप्त हो गई।

4.3.3 सामाजिक तनाव तथा धर्मांधता :–

सांप्रदायिक दंगों में किए गए सामाजिक हिंसाचार के कारण अनेक निरपराध लोग, मासूम बच्चे–बुढ़े आदि सांप्रदायिक के अग्निकांड में झुलस जाते हैं। औरतों, लडकियों पर सामूहिक बलात्कार करके उनकी हत्या की जाती है। खुशहाली और अमन

से बसे गाँवों–शहरों को उजाड बनाया जाता है जिसके कारण अनेक परिवार का टूटकर बिखर जाते हैं। बचे हुए लोगों में एक–दूसरे के प्रति वैमनस्य, संदेह, ईर्ष्या–द्वेष तथा अविश्वास का तनावपूर्ण माहौल बढता जाता है। इस उमस भरे सामाजिक तनाव में बढ़ोतरी होकर युवा–रक्त प्रतिशोध लेने की भावना से धधक उठता है। फलस्वरूप लोगों के मन में धार्मिक कट्टरता तथा धर्माधता की भावना बलवती हो जाती है। राम पुनियाना के मतानुसार –"विगत दो दशक से भी अधिक काल धर्मवादी राजनीति के अविभाज्य घटक होनेवाले सांप्रदायिक दंगें, अत्याचार, हत्याकांडों में हुई बढ़ोतरी के कारण भारतीय समाज, धर्मनिरपेक्ष लोकतंत्र और मानवी जीवन मूल्यों के सामने गंभीर संकट खड़े हैं।"[17] जो समाज में तनाव सदृश्य माहौल निर्माण करते हैं, जिससे स्वस्थ्य समाज जीवन की संकल्पना को धक्का पहुँचता है।

धार्मिक कट्टरता के कारण क्रिया–प्रतिक्रियात्मक रूप में कर्मकांडों में बढ़ोतरी होती है। कोई धार्मिक संप्रदाय मस्जिद में लाऊड स्पीकर लगाकर नमाज पढ़ने की मान्यता के लिए प्रशासन पर दबाव लाता है तो प्रतिक्रिया के रुप में 'महाआरती'का आयोजन करके दूसरा संप्रदाय प्रत्युत्तर देने का प्रयत्न करता है। जिससे सामाजिक माहौल तनावग्रस्त बनता रहता है। अतः स्पष्ट है कि दो विभिन्न धार्मिक समुदायों का आपसी वैमनस्य, धर्मान्धता समाज के शांतिमय माहौल में बिगड़ाव डालने का काम करती है जिससे समाजिक शातंता एवं सुरक्षा के सामने खतरा निर्माण हो जाता है।

4.3.4 राजनीतिक परिणाम :–

'सांप्रदायिकता' धर्मवादी राजनीति का विकृत रूप है। राजनीति के घिनौने डाँव–पेच ही सांप्रदायिकता का असली ऊर्जा स्त्रोत है। अतः सांप्रदायिक दंगों के परिणामों से राजनीति का प्रभावित होना स्वाभाविक है। सांप्रदायिक दंगें होने के बाद राजनीति क्षेत्र में काफी उथल–पुथल मच जाती है। विपक्षी राजनीतिक पार्टियाँ सत्ताधारी पक्ष के इस्तीफे की माँग करती है। जातिवादी, संप्रदायवादी पक्ष जनता की उन्मादी कमजोरी का फायदा उठाकर उपनी स्वार्थ लोलुप माँगें पूरी करने के लिए सत्ताधारी पक्ष पर दबाव डालते हैं। स्वतंत्रता पूर्व काल में मुस्लिम लीग ने 'सीधी कार्यवाही' से पृथक पाकिस्तान की माँग करके इसी धर्मान्ध राजनीति का परिचय दिया था। साथ ही स्वातंत्र्योत्तर भारत में बाबरी कांड और मुंबई बम विस्फोटों से भडके दंगों के कारण राजनीतिक सत्तांतर हो गया –"उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री कल्याणसिंह मस्जिद ढ़हाने के वृत्त समझते ही इस्तीफा देते हैं। केंद्र में (काँग्रेस) नरसिंह राव

सरकार, राज्य सरकार को बरखास्त किया गया।"[18] कश्मीर–सीमा प्रश्न ने भारतीय राजनीति को हमेशा से प्रभावित किया है। धर्मवादी मूलतत्त्वों के बढ़ने से केंद्र सरकार, राज्य सरकार तथा प्रशासन व्यवस्था का स्वरूप ही बदल जाता है, जो लोकतंत्र के लिए एक गंभीर संकट है। हाली में मुंबई पर हुए आतंकवादी हमलों के कारण महाराष्ट्र के राजनीति में हुई उथल–पुथल तथा सत्तांतर इसी सांप्रदायिकता का परिणाम है।

4.3.5 भावनिक दूरी तथा राष्ट्रीय एकात्मता के सामने गंभीर संकट :

पूरे विश्व के जनमानस को भारतीय संस्कृति तथा सभ्यता ने प्रभावित किया है। विगत कुछ दशकों से सांप्रदायिकाता की त्रासदी ने 'सर्वधर्मसमभाव' की राष्ट्रीय चेतना को क्षतिग्रस्त करने का कार्य किया है। भारत वर्ष में सदियों से अनेक धर्म, जाति, मजहबों, संप्रदायों के लोग आपसी लगाव तथा भाईचारे के साथ सौहार्दपूर्ण जीवन–निर्वाह करते आए हैं। उनमें विचार–विनिमय के साथ ही सांस्कृतिक सद्भाव का सौहार्दपूर्ण माहौल था। एक–दूसरे के संकट काल में संकटमोचन की भूमिका ली जाती थी। भारत विखंडन के बाद इस सामाजिक तथा सांस्कृतिक सद्भाव का भी बँटवारा हुआ और लोग परस्पर वैमनस्य और धार्मिक विद्वेष के शिकार हुए। सांप्रदायिक दंगों में हुए नरसंहार से मानवता, संवेदना तथा आदर्शवादी भावनाएँ लुप्त हो गई जिससे समाज में भावनिक दूरी बढती गई। मनुष्य का संवेदना हिन होना सामाजिक अखंडता के लिए भीषण संकट है जिससे राष्ट्रीय एकता को खतरा उत्पन्न होता है। कृष्णकुमार बिस्वा के मतानुसार – "भारत जैसे विशाल देश में अनेक जातियों का निवास है। इनमें आपसी सांप्रदायिक सहभावना का होना अति आवश्यक है। जब जनता में सांप्रदायिकता की भावना अपने घृणित रूप में उपस्थित होती है तब राष्ट्र का पतन आरंभ हो जाता है।"[19] भारत की सांप्रदायिक वैमनस्य की भावना राष्ट्र के पतन की संचालिका बन रही है।

धर्म, मजहब, जाति, संप्रदाय को राष्ट्र से बढकर मानना तथा उसका हित देखना मनुष्य के संकुचित वृत्ति के लक्षण है। मनुष्यों के इसी संकुचित भावना का लाभ धार्मिक संप्रदाय तथा उनसे जुडी संगठनाएँ सांप्रदायिकता का जहर फैलान के लिए उठाते हैं। जिसके कारण समाज के साथ संपूर्ण राष्ट्र का विखंडन होकर राष्ट्रीय एकात्मता को धक्का पहुँचता है। विगत कुछ दशकों से भारतीय प्रजातांत्रिक व्यवस्था को सांप्रदायिकता के गंभीर संकट का सामना करना पड रहा है। जो राष्ट्र की एकता के लिए घातक है।

* निष्कर्ष :–

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि 'सांप्रदायिकता' का रूप जितना विकृ त है, उतने ही भयावह इसके जख्म है। स्वाधीनता के वेदी पर मिले जख्म आज विभिन समस्याओं का रूप लेकर नासूर बन गए हैं। 'सांप्रदायिकता' की दानवी मनोवृत्ति का समाज के साथ मानवी मन पर भी गहरे आघात होते आए हैं। निरपराधियों की हत्याएँ, वित्त हानि, नारी विवशता तथा शरणार्थियों की समस्याओं ने भारत के सामाजिक तथा सांस्कृतिक धरोहर को हिला कर रख दिया है। मनुष्य का संवेदना शून्य होना मानवी सभ्यता के लिए गंभीर संकट बना है जिससे समाज में भावनिक दूरियाँ बढ रही है। सांप्रदायिक दंगों में युवकों का सहभाग भारत निर्माण की नीव को हिला रहा है। युवकों के धार्मिक उन्माद ने क्रिया–प्रतिक्रिया के रूप में अनेक कर्मकांडों के आयोजन धार्मिक कट्टरता को ही जन्म देते हैं जिससे सामाजिक शांतिपूर्ण माहौल तनावग्रस्त बनता है। मानवी मूल्यों में आई गिरावट ने राष्ट्रीय एकात्मता तथा लोकतंत्र के सामने गंभीर संकट को उभारा है।

4.4. सांप्रदायिकता को रोकने के उपाय :–

'सांप्रदायिकता' की त्रासदी ने भारत के जन–जन को प्रभावित किया है। भारत का प्रत्येक नागरिक सांप्रदायिकता के राक्षसी शिकंजों से निजात पाना चाहता है। 21 वीं सदी में भारत विकास के क्षितिज की ओर तेज गति से बढ़ रहा है किंतु 'धर्म' का उन्माद उसके विकास मार्ग पर रोड़ा अटकाने का कार्य कर रहा है। वर्तमान समय में 'सांप्रदायिकता' और 'आतंकवाद' जैसे असामाजिक तत्त्व भारत के सामने चुनौती बनकर प्रजातांत्रिक व्यवस्था में बिगडाव डाल रहे हैं। अतः सांप्रदायिकता के दानवी रूप से समय रहते अगाह होकर उसके जड़ोन्मूलन तथा निर्मूलन करके स्वस्थ्य समाज का निर्माण करना वर्तमान समय की माँग है। इस विषय में आज की अग्रणी समाजसेविका मेधा पाटकर लिखती है –"आज चुनौती है धर्मनीति और राजनीति के अपवित्र युति की, सरंजामी और साम्राज्यवादी मुस्लिम–अँग्रेजी राजकाल और यहाँ तक कि शिवशाही में भी राजनीति और धर्म इन दोनों संकल्पनाओं को स्वतंत्र मानकर व्यवस्था को चलाया गया। लेकिन आज 'संख्या' के आधारपर चलनेवाले लोकतंत्र व्यवस्था में मात्र धर्म का स्वार्थ पूर्ति के लिए राजनीति में इस्तेमाल हो रहा है। धर्म में स्थित मानवी–मूल्यों को नजरअंदाज करके धर्म के नाम पर अहंभाव और उन्माद का आविष्कार हो रहा है। धर्म को इस तरीके से खूँटे से बाँधने का विरोध करते हुए, धर्म

से पार इन्सान–इन्सान में समता का रिश्ता निर्माण होकर उसका बीजांकुरण और फूलना परिवर्तन के राह का पहला कदम होगा।"[20] अतः समय है इस त्रासदी से निजात पाने के लिए ठोस रचनात्मक एवं सांस्कृतिक एकता के कार्य करने का। भारत में सांप्रदायिकता की जडें बहुत गहरी है, अतः इस त्रासदी से भारत को मुक्त करने के लिए कुछ तात्कालिक और व्यापक उपाय किए जा सकते हैं, वह इस प्रकार है –

4.4.1 तात्कालिक उपाय :–

सांप्रदायिक दंगों के छिड जाने के तुरंत बाद उसपर शीघ्रता से नियंत्रण पाने के लिए तत्काल कुछ उपायों को करना दंगों की तीव्रता को कम कर सकता है। सांप्रदायिकता से भडके कौमी दंगों को कुशलतापूर्ण और निष्पक्ष तरीके से नियंत्रित करना चाहिए। संदेह से घिरे व्यक्तियों के खिलाफ दंडात्मक कार्यवाही करनी चाहिए। प्रत्यक्ष आगजनी, खून–खराबा, लूट–कसौट की घटनाओं को कॅमेराबद्ध करके समाज कंटकों को सख्त से सख्त सजा देनी चाहिए जिससे आम जनता का प्रशासन और पुलिस व्यवस्था पर विश्वास बढ़ेगा। दंगों पर तुरंत नियंत्रण पाने के दृष्टि से निम्नांकित तात्कालिक उपाय जरूर सहायक रहेंगे।

4.4.1.1 विशेष दंगा विरोधी दल का गठन :–

सांप्रदायिक दंगों में विशेष दंगा विरोधी दल अपनी विशेष भूमिका निभा सकते हैं। भारत के संवेदनशील इलाकों में धार्मिक त्योहार, उत्सवों के प्रसंग में समाज कंटकों को सीमापार करना चाहिए। दो भिन्न धर्मीय समुदायों के प्रतिष्ठित तथा विधायक विचारधारा के प्रतिनिधियों को एक मंच पर लाकर धर्म का समन्वयवादी विचार–विमर्श करना चाहिए। तिज–त्यौहारों, उत्सवों में आपसी लगाव और सौहार्द के साथ सांस्कृतिक तथा सामाजिक उन्नति का विचार विनिमय करना चाहिए। संवेदनशील इलाकों में दोनों समुदायों के अधिकारी व्यक्तियों को लेकर 'मोहल्ला समिति' का गठन करके सौहार्द का वातावरण निर्माण करना चाहिए। कौमी दंगें भड़कने से पूर्व ही इन दलों या समितियों से स्थिति पर नियंत्रण पाया जा सकता है। पुलिस यंत्रणा तथा विशेष दंगा विरोधी दलों के सुनियोजित समन्वय से कौमी दंगों को रोका जा सकता है।

4.4.1.2 कार्यक्षम पुलिस तथा तेज न्याय व्यवस्था :–

सांप्रदायिकता की त्रासदी से समाज को पूर्णरूप से मुक्त करने के लिए उस समाज की पुलिस तथा न्याय व्यवस्था प्रभावी भूमिका निभा सकते हैं। प्रशिक्षित पुलिस

कर्मी दंगों पर तत्काल नियंत्रण पा सकते हैं। विगत दशकों में भडके कौमी दंगों में पुलिस व्यवस्था स्थिति पर काबू पाने में असफल रही है। दंगों से भडकी स्थिति पर नियंत्रण रखना, दंगों में सहभागी समाजकंटकों को पकडकर अदालत में घसीटना पुलिस यंत्रणा की जिम्मेदारी है। गोध्रा हत्याकांड में पुलिस यंत्रणा की निष्क्रियता को देखा जा सकता है। अकार्यक्षम पुलिस यंत्रणा से ही इतनी भीषण घटना घटी है। राजनीतिज्ञ प्रफुल्ल बिडवई के मतानुसार – "गुजरात में कानून और सुव्यवस्था विषयक स्थिति पूरी लडखडा चुकी है। वहाँ के धार्मिक अल्पसंख्यकों और दलितों को उपेक्षा और पक्षपात का सामना करना पड रहा है। विगत तीन वर्षों में 300 से अधिक दलितों की राज्य में हत्या हुई है। दहशतवाद विरोधी कानून के नीचे गिरफ्तार किए गए मुस्लिमों का बहुत छल किया जा रहा है।"[21] अतः इस सामाजिक पीड़ा से निजात पाने के लिए प्रशिक्षित सक्षम पुलिस यंत्रणा तथा सुचारू और विधायक तेज न्याय व्यवस्था का होना बहुत जरूरी है।

सांप्रदायिक दंगों में लापरवाही करनेवाले पुलिस अधिकारियों को कडी सूचनाएँ देनी चाहिए। दंगों में सहभागी समाजकंटकों की निष्पक्ष रूप में जाँच करके उनपर मुकदमा दायर करके दोषी लोगों को सख्त से सख्त सजा देनी चाहिए जिससे कौमी दंगों में लोगों का सहभाग कम होगा। अतः कार्यक्षम पुलिस तथा निष्पक्ष न्याय इस त्रासदी से निजात पाने के तात्कालिक उपाय है।

4.4.2 व्यापक उपाय :–

सांप्रदायिकता के विषैले बीज भारत भूमि में बहुत अंदर तक धँसे हुए है। सांप्रदायिकता के विषैले वृक्ष को जडोंसहित मिटाने के लिए हमें तात्कालिक उपायों के साथ कुछ व्यापक तथा बुनयादी उपायों को निरंतर करना होगा। तभी हम सांप्रदायिकता से पूर्ण रूप से छुटकारा पा सकेंगे। सांप्रदायिकता से छुटकारा पाने के व्यापक उपाय इस प्रकार है –

4.4.2.1 हिंदू–मुस्लिम सामंजस्य पर बल :–

भारत के इतिहास में हिंदू–मुस्लिम वैमनस्य काफी पुराना है। स्वतंत्रता पूर्व काल से लेकर वर्तमान समय तक इन दो धर्मों का धार्मिक विसंवाद अनेक सांप्रदायिक दंगें–फसादों को जन्म दे रहा है। भारत का सांप्रदायिक परिवेश ज्यादातर हिंदू–मुस्लिमों के आपसी वैमनस्य से उग्र दिखायी देता है। अतः 'सांप्रदायिकता' की समस्या से कौशलपूर्ण तरीके से निपटने के लिए 'हिंदू–मुस्लिम' सामंजस्य पर बल देना

आवश्यक है। दोनों समुदायों के विधायक संवाद, धर्मों का समन्वयकारी विचार–विमर्श, सांस्कृतिक सभ्यता का आदान प्रदान, शांति–सद्भाव संगठनों का निर्माण करके दोनों समुदायों के बीच सौहार्दपूर्ण माहौल तैयार करना चाहिए। भारतीय संस्कृति के सामंजस्य तथा सौहार्द को आम लोगों तक पहुँचाना चाहिए। इस संदर्भ में प्रा. बॅशम लिखते हैं –"विश्व में अन्यत्र कत्लेआम का आनंद लेनेवाले (सॅडिस्ट) राजकर्ता अनेक हुए, किंतु प्राचीन भारत में अपवादात्मक ही ऐसी घटनाएँ घटित हुई क्योंकि भारतीय परंपरा समाविष्ट करनेवाली परंपरा है।"[22] इस परंपरा को दोनों समुदायों के शिक्षित युवकों को आगे बढाकर हिंदू–मुस्लिम एकता को प्रस्थापित करने का कार्य करना चाहिए।

इस सामंजस्य को बल प्रदान करने का कार्य हमें अपने परिवार से करना चाहिए। पारिवारीक माहौल में बच्चों पर 'सर्वधर्मसमभाव' के संस्कार करने चाहिए जिससे आनेवाली पीढ़ी में मानवतावादी विचारों का विकास हो सके। स्कूलों, महाविद्यालयों तथा विश्वविद्यालयों के पाठ्यक्रमों को निष्पक्ष रूप से तैयार करके भारतीय संविधान के उद्देश्यों की पूर्ति करनी चाहिए। शिक्षा अतिरिक्त विविध समारहों, निबंध–वक्तृत्व प्रतियोगिताएँ, संगोष्ठियों आदि गतिविधियों के माध्यम से 'सर्वधर्मसमभाव' तथा संस्कृति समन्वय पर बल देना चाहिए।

जनसंचार माध्यमों का इस स्थिति में यह उत्तरदायित्व बनता है कि वह पूर्वग्रह दूषित दृष्टिकोण से परे रहकर उदारमतवादी तथा मानवतावादी मूल्यों का प्रचार एवं प्रसार करके स्वस्थ्य समाज निर्माण में सहायता करे। जन जागरण तथा समाज जागरण के साथ भारतीय संस्कृति की समन्वयकारी भूमिका को जन–जन, घर–घर में पहुँचाने का कार्य करना चाहिए। साथ ही कवि, साहित्यकारों ने अपने विधायक साहित्यद्वारा हिंदू–मुस्लिम सामंजस्य को बढावा देकर इन दोनों मजहबों की नफरत को शांति, विश्वास तथा मोहब्बत में बदलना चाहिए । अतः हिंदू–मुस्लिमों के बीच सांस्कृतिक एवं विधायक सामंजस्य सरहद्दों को भी मिटा सकता है ऐसा हमारा विश्वास है।

4.4.2.2 धर्मों का समन्वयकारी अध्ययन :–

भारत के सांप्रदायिक परिवेश में 'धर्म' का अमंगलकारी रूप अधर्मी सांप्रदायिकता को जन्म देता आया है। इतिहास साक्षी है कि 'धर्म' तथा धर्म प्रतीकों के कारण भारत में हमेशा सांप्रदायिक बवाल उत्पन्न हुआ है। 'धर्म' मनुष्य के सामाजिक

व्यवहार का परिचालन जरूर करता है, किंतु उसका समुदाय के विकास के साथ कोई सरोकार नहीं। इस विषय में डॉ. राधा गिरधारी अपना मंतव्य देती हैं –"हमारे समाज में धर्म संबंधी अगणित मान्यताएँ हैं विभिन्न धर्मों की महत्ता में विश्वास किया जाता है, परंतु धर्म मानवीय विकास का द्योतक नहीं हो सकता हैं।"[23] अगर विकसित करना है तो धर्मों की समन्वयकारी भूमिका को विकसित करना चाहिए जो मनुष्य के सांस्कृतिक सभ्यता की पहचान है। धार्मिक कट्टरता हमेशा विध्वंस का ही पैगाम लाती है। अतः धर्मों के उन मानवी मूल्यों का समन्वयकारी अध्ययन होना चाहिए जो अखिल मानव जाति के विकास में सहायक बन सके। 'धर्म' तथा 'धर्म ग्रंथों' का विधायक तथा निष्पक्ष रूप से अध्ययन सांप्रदायिक सद्भाव को जन्म दे सकता है। धर्मों का समन्वयकारी रूप अखिल मानव समाज के उन्नति का प्रशस्त मार्ग होगा। अतः धर्मों के समन्वयकारी अध्ययन के जरिये मानवी जीवन मूल्यों को बढावा देकर 'मानवता धर्म' का निर्माण सांप्रदायिकता के उत्पीड़न से बचने का कारगर उपाय होगा।

4.4.2.3 धार्मिक मूलतत्त्ववाद के विषैले प्रचार को प्रतिबंध :–

किसी भी धर्म या संप्रदायों के मूलतत्त्ववाद का प्रचार उस धर्म तथा धर्म श्रद्धालु के मानसिक संकुचित भावना का द्योतक है। इतिहास गवाह है कि भारत में इसी मूलतत्त्ववाद की कट्टरता ने संस्कृति, समाज तथा मानव सभ्यता को हमेशा तहस–नहस कर दिया है। मंदिर–मस्जिद श्रद्धा के क्षेत्र कम धार्मिक विसंवाद के केंद्र बनते जा रहे हैं। 'धर्म सभा' को 'धर्म संसद' का स्वरूप आया है जिस में से सांप्रदायिक मूलतत्त्ववाद के नियम पारित हो रहे हैं। मस्जिदों में समाज विखंडन के षड्यंत्र को अंजाम दिया जा रहा है। मुस्लिम राष्ट्रवाद की प्रतिक्रिया के रूप में हिंदुत्ववाद भारत की सांस्कृतिक महानता की जडों को खोखला बना रहे हैं। अतः सांप्रदायिक त्रासदी मुक्त भारत–निर्माण करने के लिए धर्म के मूलतत्त्ववादी विषैले प्रचार को प्रतिबंध लगाना वर्तमान समय की माँग है। महाराष्ट्र के सत्यशोधक समाज, राष्ट्र सेवा दल जैसी पुरोगामी विचारधारा के संगठनों के जरिए विधायक प्रबोधन करके मूलतत्त्ववादियों के विषैले प्रचार पर प्रतिबंध करना आवश्यक है जिससे धर्म निरपेक्ष मूल्यों में वृद्धि होगी और आतंकमुक्त समाज का निर्माण करना सहज साध्य होगा।

4.4.2.4 समताधिष्ठित समाज रचना का निर्माण और धर्मनिरपेक्ष मूल्यों पर बल :–

सांप्रदायिक उन्माद में धर्म के साथ जाति, प्रांत तथा भाषा का भी स्त्रोत के रूप में इस्तेमाल होता आया है। इस सामाजिक समस्या से निजात पाने के लिए अल्पसंख्यकों तथा दलितों के सामाजिक, आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए प्रभावी इंतजाम करने चाहिए। 'आरक्षण नीति' को निष्पक्ष रूप में कार्यान्वित करके सांप्रदायिक सद्भाव में वृद्धि करनी चाहिए। इस विषय में आनंद प्रकाश लिखते हैं –"राजनेताओं ने न तो मुसलमानों की सुरक्षा का कोई प्रभावी इंतजाम किया, और न ही सांप्रदायिकता को खत्म करने के लिए कोई तेज अभियान चलाने में दिलचस्पी ली।"[24] अतः सांप्रदायिकता को खत्म करने के लिए उचित कदम उठाने होगे।

पिछडी जाति–जनजातियों को विकास के मार्गपर साथ–साथ ले चलने से ही समताधिष्ठित समाज का निर्माण होगा। इसी कारण डॉ. यादवराव धुमाळ लिखते हैं –"जब तक अछूतों की आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं होगा, तब तक उन्हें सामाजिक रूप से समानता की श्रेणी प्रदान नहीं की जा सकेगी।"[25] समताधिष्ठित समाज निर्माण से हम इस त्रासदी का बखूबी सामना कर सकते हैं।

वर्तमान समय में भाषावाद, प्रांतवाद ने धर्मनिरपेक्ष मूल्यों की धज्जियाँ उडायी है। अतः भारत जैसे बहुभाषिक देश में प्रांतीय भाषा के साथ 'राष्ट्रभाषा हिंदी' का संवर्धन तथा भाषाओं का 'तुलनात्मक अध्ययन' भाषा विकास के साथ भारत के सांस्कृतिक विकास में सहायक रहेगा। हरएक राज्य तथा राज्य सरकारों को प्रांत केंद्रित रोजगार तथा जीवनावश्यक जरूरतों को निर्माण करके जन विकास को बढ़ावा देना चाहिए जिससे प्रांतीय वाद को कुशलता से निपटाया जा सकेगा।

भारत धर्मनिरपेक्ष मूल्यों पर खडा प्रजातांत्रिक देश है। अतः सांप्रदायिकता के निर्मूलन के लिए धर्मनिरपेक्ष संसदीय मूल्यों पर बल देना आवश्यक है। मानवता को ही सबसे बुनयादी तथा ठोस धर्म मानना चाहिए। 'सर्वधर्मसमभाव' की नीति से सौहार्दपूर्ण समाज का प्रचलन धर्मनिरपेक्ष मूल्यों को जीता सकता है। अतः समताधिष्ठित समाज रचना का निर्माण और धर्मनिरपेक्ष मूल्यों पर बल सांप्रदायिक त्रासदी से निजात दे सकते हैं।

4.4.2.5 युवकों को देश विधायक कामों में लगाना :–

किसी भी देश की युवा संख्या उस देश के विकास की परिचायक होती है। युवक देश के आधार स्तंभ होते हैं, जिनसे सामाजिक और सांस्कृतिक उत्थान होता है। युवकों की देशविघातक कृति उस राष्ट्र के पतन की संवाहिका होती है। सांप्रदायिक

विध्वंस में अधिक तर युवकों का इस्तेमाल किया जा रहा है। शिक्षा व्यवस्था की विसंगतियाँ तथा रोजगारहीनता ने भारतीय युवक नैराश्य के कुचक्र में फँसे हैं। युवकों की इस निराश मानसिकता का लाभ उठाकर उनकी शक्ति तथा खाली दिमाग को रूपयों के लालच से खरीदा जाता है। चरस, गाँजा, ड्रग्ज, शराब के आधिन युवकों को सांप्रदायिकता के उन्माद में इस्तेमाल किया जाता है जिससे सांप्रदायिकता का उग्र रूप हमें देखने मिलता है। डॉ. क्षितिज धुमाळ के मतानुसार –"समाज की धार्मिकता के प्रति श्रद्धा का फायदा राजनीतिज्ञों ने उठाना शुरू किया, भाजपा की हिंदू जीवन पद्धति पर देश की मध्यवर्गीय युवा पीढ़ी आकर्षित होने लगी।"[26] अतः संकुचित मनोवृत्ति के युवक कौमी दंगों को अंजाम देना अपना कर्तव्य समझ रहे हैं। अतः उन्हें विधायक कामों में लगाना सांप्रदायिकता से निजात पाने का कारगर उपाय है। आधुनिक तंत्रज्ञान, रोजगारभिमुख शिक्षा, धर्म के समन्वयकारी रूप तथा शाश्वत विकास से युवकों को परिचित करना चाहिए।

राजनीति तथा राजनेताओं के स्वार्थ लोलूप चेहरों को बेनकाब करके युवकों को विधायक राजनीति तथा सामाजिक विकास नीति से परिचित करना होगा। देश की प्रशासन व्यवस्था को रोजगार के नये–नये अवसरों को पैदा करके युवकों को देश विकास में भागीदार बनाना चाहिए। विधायक कार्यों के जरिये उनके सामने आदर्श प्रस्तुत करना समय की माँग है जिससे सब युवक एक ऐसे शाश्वत भारत का निर्माण करेंगे जिसमें होगा परस्पर स्नेह, सौहार्द, सामंजस्य, अमन और शांति से भरपूर स्वस्थ्य समाज और वे कहलाएँगे नव भारत के निर्माणकर्ता।

*** निष्कर्ष :–**

उपर्युक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि सांप्रदायिक त्रासदी के जड़ोन्मूलन के लिए हमें कारगर उपाय करने होंगे। उपर उल्लेखित उपायों का सक्रिय तथा निरंतर रूप से क्रियान्वयन इस त्रासदी से भारत को जरूर मुक्त कर पायेगा। प्रशिक्षित पुलिस प्रशासन तथा सुचारू और तेज न्यायव्यवस्था के साथ हिंदू–मूस्लिम धर्मों के सामंजस्य में प्रत्येक भारतवासी का सहभाग, न्याय पर आधारित राजनीति एवं समाजनीति तथा धर्मनिरपेक्ष प्रजातांत्रिक जीवन–मूल्यों की रक्षा एवं विश्वास आदि उपायों का समक्षता के साथ निर्वाह सांप्रदायिकता के दानवी शिकंजों से भारत को मुक्त कर सकेंगे और मानवता का धर्म तथा मानवी सभ्यता का शाश्वत विकास होता रहेगा।

उपर्युक्त सभी तथ्यों को विवेच्य उपन्यासों के उपन्यास लेखकों ने कहाँ तक न्याय देने का काम किया है, इसे हम देखेंगे। आज सांप्रदायिकता से बडे–बडे शहर विद्‌ग्ध बनते जा रहे हैं। शहरों–महानगरों की सांप्रदायिकता की हवा ने भारतीय ग्रामीण जन–जीवन की मानसिकता में भी कैसे बिगडाव की स्थितियों का निर्माण किया है, इस पर भी इन लेखकों ने कैसे चिंतन किया है, इसे तलाशने का प्रयास हमने प्रस्तुत लघुशोध–प्रबंध में किया है।

4.5. विवेच्य उपन्यासों में चित्रित सांप्रदायिकताः–

'साहित्य' मानव जीवन की यथार्थवादी व्याख्या है। मनुष्य के सामाजिक जीवन के क्रियाकलापों का प्रतिबिम्ब साहित्य में दृष्टिगोचर होता है। 'हिंदुस्थान का बँटवारा' भारतीय इतिहास की एक ऐसी लांछनास्पद घटना है, जिसमें भारतीय संस्कृति बुरी तरह क्षतिग्रस्त हुई। उस सांप्रदायिक विद्‌वेष में मनुष्य के संवेदनाहीन बर्बर पाशवी रूप ने समस्त देश को हिला दिया। मनुष्य के इस मूल्यहीनता से भारतीय साहित्य का प्रभावित होना स्वाभाविक था। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी साहित्य में अनेक उपन्यासकारों ने बँटवारे की पीड़ा तथा उससे निर्माण समस्याओं से प्रभावित भारतीय जनमानस का यथार्थवादी अंकन किया है। 'सांप्रदायिकता' साहित्यिक क्षेत्र में ऐसा केंद्र बिंदु है, जो स्वातंत्र्योत्तर काल से लेकर बीसवीं सदी के अंतिम दशक तक की साहित्यिक कृतियों में बरकरार है। इस संदर्भ में चमनलाल अपना मंतव्य व्यक्त करते हुए लिखते हैं –"बीसवीं सदी के हिंदी उपन्यासों में 1947 तक ऐसा संदर्भ बिंदु है, जो बीसवीं सदी के आरंभ से इसके अंत तक निरंतर गतिमान है। यह संदर्भ बिंदु सांप्रदायिकता है, जो देश के विभाजन का भी कारण बनता है और विभाजन के बाद भी पूरे देश के जनसामान्य को बाल ठाकरे के 'रिमोट कण्ट्रोल' की तरह अपने कण्ट्रोल में रखता है।"[27] अतः 20वीं सदी के अंतिम दशक के विवेच्य ग्रामीण परिवेश पर आधारित उपन्यासों में सांप्रदायिक त्रासदी से पीड़ित ग्राम–जीवन का यथार्थवादी वर्णन देखने मिलता है। वीरेंद्र जैन के 'डूब' (1991), मैत्रेयी पुष्पा के 'इदन्नमम' (1994) तथा अब्दुल बिस्मिल्लाह के 'मुखडा क्या देखे' (1996), आदि विवेच्य उपन्यासों में बँटवारे से भडकी सांप्रदायिक के विषाक्त माहौल से ग्राम्य–जीवन की एकता तथा खुशहाल जिंदगी में किस कदर दरारें पड रही है, इसका चित्रांकन विवेच्य उपन्यासों में किया गया है। अतः यहाँ विवेच्य उपन्यासों के माध्यम से ग्रामीण संस्कृति को आहत करनेवाली सांप्रदायिक षड्‌यंत्र नीति को स्पष्ट करने का प्रयास हमने किया है।

4.5.1 वीरेंद्र जैन के 'डूब' (1991), उपन्यास में चित्रित सांप्रदायिकता

'डूब' वीरेंद्र जैन का सन् 1991 में प्रकाशित पुरस्कार प्राप्त उपन्यास है। लडैई गाँव के ग्रामीण परिवेश को केंद्र में रखकर लिखे गए इस उपन्यास में सन् 1857 से लेकर स्वातंत्र्योत्तर कालखंड का संक्षिप्त परिचय दिया गया है। लेखक ने कुछ सांप्रदायिक वारदातों से गाँवों में फैले विषाक्त माहौल को दर्शाया है। धर्म, जाति के दबाव में हो रहे शोषण को वाणी देने का प्रयत्न किया है। 'डूब' की समीक्षा करते हुए रामदरश मिश्र लिखते हैं –"राजनीति, प्रशासन, अर्थतंत्र और धर्म–व्यवस्था सभी मिलकर किस तरह गाँव का जीवन–रस सोख रहे हैं, इसकी कहानी है –'डूब'।"[28] अतः यहाँ उपन्यास की उन घटनाओं को देखेंगे, जो सांप्रदायिक त्रासदी का नतीजा है –

4.5.1.1 बँटवारे से भडके दंगों की खबर से लडैई गाँव में सांप्रदायिकता :–

लडैई गाँव में घटिया के ऊपर दो–तीन मुसलमानों के मकान थे । उन्हीं के बीच रघुसाव का मकान था। लडैई गाँववालों की इस बात की कुछ खबर नहीं थी कि बँटवारा किस का हो रहा है, आजादी क्या है और दंगों में कौन–कौन मारे गए। बडे साव के लडके ने आकर माते को न जाने क्या समझाया कि माते का खून खौल उठा। फिर गाँव के मुसलमानों के रहते आजादी का कोई मतलब नहीं और इसी मानसिकता से गाँव के हिंदू धर्माभिमानी भडके उठे और उन्होंने मुसलमानों पर हमला किया। प्रत्युत्तर में मरते–मरते मुस्लिमों ने उनके निकटतम पडोसी रघुसाव के लडकों की बीवियों को ढेर कर डाला, –"फिर तो महिनों तक वे हिंदुओं की रक्षा, विधर्मियों के नाश का अलख जगाते रहें। और अपना जनम तभी सकारथ हुआ माना जब गाँव में बसे तमाम मुसलमानों को 'मुसलमानी' पथरा' के तरें दबवा लिया।"[29] माते तथा हिंदू धर्माभिमानी गाँववालों ने 'धर्मकार्य' के उन्माद में मुस्लिमों को मार डाला। 'मुसलमानी पथरा' उसी सांप्रदायिक विद्वेष का प्रतीक था।

4.5.1.2 मोतीसाव का बिरादरी से बहिष्कृत होना :–

लडैई गाँव में 'मुसलमानी पथरा' से बनी पगडंडी से जाना मना है क्योंकि यह धर्मभ्रष्ट कार्य माना जाता है। 'मुसलमानी पथरा' से बनी पगडंडी से जिले के शहर जाना आसान था शर्त एक ही थी कि वहाँ से जाते समय वहाँ एक पत्थर चढाना पडता

है। मोती साव ने समय के अभाव में सरपंच चुनाव के लिए नामांकन भरने के लिए 'पथरा बब्बा' की पगडंडी से जाने का इरादा किया। उन्होंने पूरी सावधानी से पथरा बब्बा को पत्थर चढाया लेकिन घूमा चमार ने उन्हें देख ही लिया। बात सारे गाँव में फैल गई और गाँव में मोतीसाव के खिलाफ तनाव निर्माण हुआ। मोतीसाव ने प्रायश्चित करने का प्रयत्न किया लेकिन बिरादरी ने उनकी एक नहीं मानी– "लेकिन हमें इससे कोई सरोकार नहीं मोती। हमने तो यह तय किया है कि अब हम तुम्हें दिगंबर जैन नहीं मानेंगे।"[30] मोती साव को बिरादरी बाहर करने के बाद ही गाँव ने चैन की साँस ली।

अतः 'डूब' उपन्यास में आजादी के बाद हुए बँटवारे से भडकी सांप्रदायिकता ने लडैई गाँव को भी प्रभावित किया। बँटवारे के दिनों शहरों में उभरे सांप्रदायिक दंगों की हवा ने लडैई गाँव के ग्रामीणों की मानसिकता में भी सांप्रदायिकता के विषैले बीज बोये। इसका पता लगता है। डॉ. क्षितिज धुमाळ के मतानुसार –"'डूब' उपन्यास में गाँव–जीवन में फैला सांप्रदायिकता का जहर देखने को मिलता है। भारत–पाक निर्मिति के बाद गाँव में मुसलमानों के खिलाफ एक लहर उठी। लडैई गाँव में दो–तीन मुस्लिम घटिया ऊपर रहते थे, उन्हीं के बीचोबीच रघुसाव का घर था। आजादी की हवा ने ग्रामांचलों में यह मानसिकता उभार दी कि मुसलमानों के रहते आजादी का कोई अर्थ नहीं है, तब उन्हें मार डाला गया। मुसलमानों के शव दूर जंगल में गाड दिए गए जो 'मुसलमानी पथरा' के नाम से जाने जाते हैं।"[31]

इस उपन्यास में गाँव में हुए सांप्रदायिक फसाद की क्षति रघुसाव को पहुँचना, इससे उसका गाँव से पलायन करने की सोचना, बामण महाराज का उसे समझाने पर उसका चौराहे पर आना, रघुसाव द्वारा गाँव में न रहने का निश्चय करना, रघुसाव की परचून की दूकान को मुसलमान दंगाइयों द्वारा आग लगाना, इसमें रघुसाव के घर की औरतों का खाक होना, दो छोटे–छोटे बच्चों को मुसलमानों द्वारा मारा जाना, परिवार की औरतों और बच्चों के निर्मम कत्ल के कारण रघुसाव के बेटों द्वारा गाँव छोडने का निर्णय लेना, माते द्वारा समझाने पर भी न सुनना ये सारी घटनाएँ ग्रामांचलों में उभरे सांप्रदायिकता की भयावहता को निर्देशित करती है। इसी की भयावहता से आज गाँव के लोग पलायन कर रहे हैं। यह भी स्पष्ट होता है कि सांप्रदायिकता की हवा ने गाँव जीवन को कैसे ध्वस्त कर दिया है ? इसका भी पता चलता है। मोतीसाव द्वारा 'मुसलमानी पथरा' में पत्थर चढाने के कारण गाँववालों

द्वारा मोतीसाव को धर्मभ्रष्ट घोषित करके बिरादरी से बहिष्कृत करना गाँव की संकुचित मनोवृत्ति का द्योतक है, जिससे 'ग्राम संस्कृति' क्षतिग्रस्त हो रही है।

4.5.2 'इदन्नमम' में चित्रित सांप्रदायिकता :–

'इदन्नमम' (1994), मैत्रेयी पुष्पा जी का रचना क्रम की दृष्टि से तीसरा उपन्यास है। बुँदेलखंड के ग्रामीण परिवेश से जुडे इस उपन्यास में सांप्रदायिक पीड़ा का वर्णन गहराई से किया गया है। मैत्रेयी जी ने सांप्रदायिकता को बढावा दे रहे असामाजिक तत्त्वों को सूक्ष्म दृष्टि के साथ स्पष्ट किया है। डॉ.प्रा.लक्ष्मण पाटील के मतानुसार –"धर्म की आड में जातिवाद व सांप्रदायिकता को बढावा दे रहे असामाजिक तत्त्वों और जन–जीवन पर हुए इसके बेशुमार असर को भी मैत्रेयी जी ने सूक्ष्मता से रेखांकित किया है।"[32] 'इदन्नमम' उपन्यास के उन्नीसवें खंड में 'मंडल कमिशन' और 'अयोध्या' का मंदिर–मस्जिद विवाद इन दो घटनाओं के माध्यम से लेखिका ने सांप्रदायिक त्रासदी का विवेचन निम्नांकित रूप में किया है–

4.5.2.1. 'मंडल कमिशन' पर गाँव में उठा कोलाहल :–

'इदन्नमम' उपन्यास में 'मंडल कमिशन' के द्वारा सरकारी नौकरियों में पिछडी जातियों के लिए मिले 'आरक्षण नीति' का गलत प्रचार किया जाता है। दिल्ली–ग्वालियर में 'मंडल कमिशन' के विरोध में भडके सांप्रदायिक दंगों का अवैधानिक प्रचार करके बहरा वकील गाँववालों के भोलेपन का फायदा उठाकर कहता है कि "लो, अब बामन–बानियों के लड़कों–बच्चों को नहीं मिलेगी नौकरी चाकरी। अब तो सिरकार यादव, कुर्मी, लोधों के देगी सर्वस। जैसे चमार–मैतरों को मिलती है।"[33] बहरा वकील के संकुचित मानसिकता के प्रचार से गाँव के लोग भीतर–ही–भीतर सुलगते हैं और फिर एक–दूसरे पर टूट पडते हैं। श्यामली गाँव इस विध्वंस में जाति–उपजातियों में विखंडित हो जाता है। इस आपसी वैमनस्य से ग्राम–एकता को धक्का पहुँचता है।

4.5.2.2. अयोध्या के मंदिर–मस्जिद विवाद पर उठा कोलाहल :–

'मंडल कमिशन' पर उठे बवाल के शांत होने से पूर्व ही अयोध्या के मंदिर मस्जिद विवाद की खबरों से श्यामली का वातावरण पुनः तनावग्रस्त बनता है। 'बाबरी कांड' के अफवाहों से भरी खबरों को सुनकर लोग आपस में झुलस पडे। माँझे गाँव के हिंदुओं ने हल्ला मचा दिया –"अजुध्या जी में पनमेसरी मसजिद ढहाके मंदिर की

अस्थापना होगी। रामजी, लछमन जी ओर सीता जी पधरायी जायेंगी उस जगह।"[34] कुछ दिनों तक गाँव में हिंदुत्ववादी उन्माद चलता है। हिंदुओं द्वारा बाबरी मस्जिद ढहाते समय मुस्लिमों द्वारा हिंदू लोगों को मार डालने की खबरों से श्यामली में भी सांप्रदायिक जंग छिड जाती है। गाँव के हिंदू लोगों ने गाँव की मस्जिद को लक्ष्य बनाकर क्रोधाग्नि में उसे क्षति पहुँचायी। गोबर, गू–मूत से उसे अपवित्र कर दिया। मुस्लिम लोगों के घरों को अपने विद्वेषी आग में जला डाला। गाँववालों ने चीफ साहब के घर को तबाह कर डाला। श्यामली के प्रधान गांधीवादी दादा पंचमसिंह ने लोगों को समझाया लेकिन लोग नहीं माने –"पर लोग कहाँ माने दादा को एक कनायें ढकेलकर लगे रहे गिराने में और फिर आये तो दरवाजें की किवाडों पर टूट पडे। बखरी के भीतर भाभी जान अम्माजान रोने लगी। ऐन नर्याटे मचने लगे। जैसे बकरियों का झुँड एक साथ कतल कर दिया हो किसी ने। उसी तरह की दिल हिलानेवाली चिल्लाहट।"35

श्यामली–मोंठ–चिरगाँव के आस–पास इसी राम प्रलय में बन्ने मास्साब का कत्ल कर दिया जाता है – "दंगे–फसाद में ही किसी नासिया ने कर दिया उनका कतल। लहास तीन दिना पीछे मिली थी, जौरा के रस्ता में। चिन्हार नहीं पड रहे थे बन्ने मास्साब।"[36] बन्ने मास्साब के न रहने पर उनकी बेटियाँ परिस्थिति के कुचक्र में फँसकर वेश्याएँ बन जाती है। मुस्लिमों पर अमानवीय अत्याचार करके उन्हें बेघर किया जाता है।

अतः संक्षिप्त में हम कह सकते हैं कि 'इदन्नमम' उपन्यास में 'मंडल कमिशन' और 'बाबरी कांड' की घटनाओं के कारण गाँव का सांप्रदायिक माहौल गर्म होता है। 'इदन्नमम' उपन्यास में सांप्रदायिक फसादों की गतिविधियाँ गाँव जीवन तक कैसे पहुँची है, इस पर मैत्रेयी ने गहराई से चिंतन किया है। भा.ज.प. की रथयात्रा ने सांप्रदायिकता के जहर को गाँव जीवन के जन सामान्य तक पहुँचाया। दिल्ली–ग्वालियर के युवक–युवतियों का इस फसाद में मर जाना, रथयात्रा की खबरें रेडियों पर गाँव के लोगों ने सुनी, अयोध्या मामले के समाचार प्रसारमाध्यमों द्वारा प्रसारित होने के कारण इसका असर गाँव के लोगों पर होने लगा, उपन्यास की कुसुमा लोगों से कहती हैं –सब जगह आदमी के मुख से एक ही चर्चा सुन ली कि अयोध्या में पनमेसरी मस्जिद ढहाके मंदिर की स्थापना होगी। वहाँ राम, लक्ष्मण, सीताजी की प्रतिष्ठापना होगी। इससे श्यामली गाँव के लोग जल उठे, पराई जगह अपनी

देवी–देवता को बसानेवाले के प्रति उनके मन में क्रोध उभर उठता है। विवेच्य उपन्यास में लेखिका ने सांप्रदायिक फसाद को निर्माण करनेवाली अनेक घटनाओं का गहराई के साथ चित्रण किया है। चारों तरफ हिंदुओं द्वारा मस्जिद ढहाने का और मुसलमानों द्वारा हिंदुओं की होनेवाली कत्लों का समाचार सर्वत्र फैलना, मुसलमानों की कत्ल के लिए हिंदुओं का दौडना, श्यामली गाँव के नथू, धनसिंह, परकास आदि का लाठियाँ हाथ में लेकर चीफ साहब के द्वार पहुँचना, पल्लेपुरा के अर्जुन, भगवान सिंह, रामभरोसे आदि का हाथ में हथियार लेकर आना, मुस्लिम चीफसाहब के दरवाजे पर आकर दंगाइयों द्वारा गाली–गलौज करना, चीफ साहब का दरवाजा बंद करके घर में बैठ जाना, लोगोंद्वारा मस्जिद ढहाना, दादा पंचमसिंह द्वारा दंगाइयों को मस्जिद गिराने से रोकना, दादा पंचमसिंह को ढकेलकर लोगों का मस्जिद गिराने में जुट जाना, बखरी में भामीजान और अम्माजान का रोते रहना, नथू द्वारा दादा पंचमसिंह को बड़े मुल्ला कहकर उपेक्षित करना, दादा द्वारा लोगों को अफवाहों पर विश्वास न करने को कहना, दादा की बातों में न आकर गाँववालों द्वारा चीफसाहब को तबाह करने का निश्चय करना, मुस्लिम चीफ साहब को और उनपर रहम दिखानेवाले हिंदू दादा पंचमसिंह को लोगोंद्वारा घिराव डालना, चीफसाहब के घर की किवाडों को लोगोंद्वारा तोड़ना, इस फसाद को रोकने के लिए दादा पंचमसिंह का बखरी की चौखट के सामने लेट जाना, उनका कत्ल करके बखरी को ध्वस्त करने का आवाहन दादा द्वारा करना, इसपर दंगाइतों का शांत होकर वापस लौटना, मुस्लिम चीफ साहब को गले लगाकर गांधीवादी दादा पंचमसिंह का खूब रोना ये सारी घटनाएँ सांप्रदायिकता की विद्ग्धता की गवाही देती है।

फसाद से आहत चीफ साहब द्वारा लोगों में उठना–बैठना बंद कर देना, टूटी मस्जिद में चीफ साहब का नमाज के लिए आना, गाँववालों द्वारा मुस्लिम प्रार्थना गृह के परिवेश में गंदगी फैलाना, इस गंदगी के साफ करने आयी मेहतरानी को धमकाना, हिंदू होकर मुसलमानों के घर सफाई न करने के लिए मेहतरानी को धमकाना, चीफ–साहबद्वारा नमाज छोडकर डरकर कबूतर की भाँति घर में बैठना, चीफसाहबद्वारा श्यामली गाँव में न रहने का निश्चय करना, ये सारी घटनाएँ शहर की सांप्रदायिकता की विद्ग्धता गाँव जीवन तक कैसे फैली, इसकी गवाह है। डॉ. क्षितिज धुमाळ के मतानुसार –"दादा पंचमसिंह जैसे गांधीवादी व्यक्ति इस सांप्रदायिक हवा को रोकना चाहते हैं परंतु यहाँ गांधीवाद पर बाह्य आतंकवाद हावी हो रहा है, गाँव की

एकता इससे खंडित होती जा रही है। आज भारतीय गाँव धर्म–संप्रदायों में बाँटे जा रहे हैं, गरीब, निरीह लोग उखड रहे हैं।"[37]

इस हादसे में श्यामली गाँव के लोग मुसलमानों की जमीनें, जायदाद, बखरी हडप करते हैं परंतु मस्जिदवाली जगह को दादा किसी को हडप करने नहीं देते हैं। सांप्रदायिक फसादों में कत्लें होती है, घरबार तबाह होते हैं, उदरपूर्ति के साधन ध्वस्त होते हैं, बची हुई औरतों को उदरपूर्ति के लिए जिस्म का सौदा करना पडता है। इस उपन्यास में ये तथ्य यथार्थ रूप में उभर आये हैं। इसमें बन्ने मास्साब का कत्ल हुआ, उनका और चीफसाहब का घर–बार तबाह हुआ, उदरपूर्ति का साधन रह न जाने के कारण बन्ने मास्साव की बेटी और मुस्लिम चीफ साहब की भतीजों को देह विक्रय करना पडता है। गांधीवादी दादा पंचमसिंह वेश्याबस्ती में जाकर इन लडकियों को इस कीचड से बाहर निकालते हैं। डॉ. क्षितिज धुमाळ के मतानुसार– "इस उपन्यास में गाँवों के बीच उभरनेवाली साांप्रदायिकता को लेखिका ने गहराई से चित्रित किया है। और गांधीवादी दादा पंचमसिंह के माध्यम से सांप्रदायिक फसादों को रोकने प्रयत्न किया है। विवेच्य उपन्यास में मंदिर–मस्जिद के रूप में सांप्रदायिक भेदभाव को उभारा है।"[38]

अतः स्पष्ट है 'इदन्नमम' ग्राम–जीवन में उभरनेवाली सांप्रदायिक त्रासदी का यथार्थवादी दस्तावेज है जिसमें मैत्रेयी जी ने सांप्रदायिकता का सूक्ष्मता से चित्रण करके दादा पंचमसिंह द्वारा 'गांधीवाद' पर हावी हो रहे आतंकवादी तत्त्वों की ओर पाठकों का ध्यानाकर्षण किया है।

4.5.3.'मुखडा क्या देखे' में चित्रित सांप्रदायिकता :–

'मुखडा क्या देखे' अब्दुल बिस्मिल्लाह का सन् 1996 में प्रकाशित भारतीय ग्रामीण समाज की कहानी बयान करनेवाला ग्रामांचलिक उपन्यास है। उपन्यास में अनेक घटनाएँ एवं प्रसंग ऐसे हैं, जो सांप्रदायिकता या सांप्रदायिक विचारधारा को जन्म देते हैं। पं. रामवृक्ष पांडे के जनसंघीय हिंदुत्ववादी विचार, खिश्चन मशिनरियों द्वारा धर्मांतरण करने के लिए किया जानेवाला दबाव, धर्मांतरण की घटनाएँ, अंतर्जातीय तथा अंतर्धर्मीय विवाह से भडके दंगें तथा जातीवादी हीन मानसिकता आदि के कारण गाँव में सांप्रदायिकता की अग्नी भडक उठती है। इसे हमने यहाँ दिखाया है –

4.5.3.1.ग्रामांचलों में उभरनेवाले जातीय एवं सांप्रदायिक झगडें:–

'मुखडा क्या देखे' उपन्यास में पं. रामवृक्ष पांडे हिंदुत्ववादी विचारधारा के कारण मुस्लिमों के सख्त खिलाफ है। उनके हिन्दुत्ववादी विचारों को यह बात कतई बरदाश्त नहीं हुई कि मुस्लिमों के रहते भारत का बँटवारा हो गया। भारत आजाद हो गया। वे संपूर्ण भारत विभाजन तथा आजादी के भोक्ता थे –"वे अक्सर कहा करते थे, कि जिसको खिलाओं भरपेट खिलाओं और जिसको मारो जान से मारो। अधूरे काम उन्हें पसंद नहीं थे। उनका बस चलता तो एक काम उन्होंने अवश्य किया होता; स्वाधीनता के पश्चात् देश जब बँट ही रहा था, तो सारे मुसलमानों को वे पाकिस्तान भिजवा देते और पूर्वी पाकिस्तान का लपूझन्ना भी न लगने दे दे। कोई काम हो तो पूरा हो। या इधर, या उधर।"[39] ये हिंदुत्ववादी विचार उन्हें मुस्लिमों के खिलाफ करते हैं।

गाँव के अल्ली चुड़िहार का पं. रामवृक्ष पांडे की बेटी लता की शादी में न आने के कारण वे क्रोध में आकर वे उसे पीटते हैं। वे हकूमत करने के उद्देश्य से कहते हैं –"शुभ अवसर पर हलवाई आया, कोंहार आया, चमार और पासी आए, सिपाही नाऊ भी आया, मगर अल्ली चुड़िहार क्यों नहीं आया। जरूर उस मुसल्ले का दिमाग खराब हो गया है। अब बन न गया पाकिस्तान, हिंदुस्तान में जगह न मिली तो पाकिस्तान चले जाएँगे।"[40] अल्ली चुड़िहार पं. रामवृक्ष पांडे के दहशतवादी रवैये से गुस्सा होकर तत्कालिन प्रधानमंत्री पं. नेहरू से उनकी शिकायत करने के लिए इलाहाबाद जाता है। इससे गाँव में सांप्रदायिक तनाव निर्माण होता है। हिंदुस्तान के बँटवारे से निर्मित सांप्रदायिक मानसिकता के दर्शन यहाँ होते हैं।

बलापुरा में जातिव्यवस्था के कडे बंधन होते हैं। जातिवादी हीन मानसिकता के कारण भी गाँव तनावग्रस्त बनते हैं। जब्बार मौलवी अल्ली चुड़िहार को अपने से हल्का मुसलमान मानते है। शब्बीर चुड़िहार चुनिया की शादी की दावत में कल्लू चुड़िहार को देखकर गुस्सा होता है और उसके साथ बैठकर खाने से मना करता है –"क्या आप लोगों को पता नहीं है कि कल्लू चुड़िहार रहमान बेहना की लडकी को रख लिया है। एक चुड़िहार बेहना की लडकी को बीबी बनाए, क्या यह बर्दास करने की बात है। कल्लू ने पूरे भुड़वारा टाट की तौहीनी की है।"[41] इस अपमान से कल्लू भी क्रोधित हो उठता है। ऊँच–नीच मानने की मानसिकता तथा जातीय भेदभाव आदि के कारण गाँव–जीवन का माहौल अत्यंत बिखरा हुआ लगता है।

4.5.3.2. अंतर्जातीय–धर्मिय विवाहों से भडके सांप्रदायिक दंगें :–

'मुखडा क्या देखे' उपन्यास में जबलपुर के संपन्न हिंदू और मुस्लिम परिवार के युवक–युवती के प्रेम–विवाह करने से सांप्रदायिक दंगें छिड जाते हैं। अल्ली ने यह बात रेडियों पर सुनी थी –"जबलपुर के एक सेठ का लडका है अनवर और दूसरे सेठ की लडकी है उषा, दोनों में कुछ प्यार–मुहब्बत हो गई, बस नामुरादों को मौका मिल गया। लड पडे। अब न जाने कितने बेगुनाहों हा खून बह रहा है ....।"[42] पं. नेहरू के समझाने पर दंगे बंद हो जाते हैं। सापंदायिक फसाद का विभिन्न धर्मियों के बीच प्रेम भी एक कारण हो सकता है। इसपर यहाँ चिंतन किया गया है।

अल्ली चुड़िहार का लडका बुद्धू और भगतराम (तोते) की बेटी भूरी का आपस में प्रेम और उसके पश्चात् उनका भाग कर शादी करना, गाँव में तनाव पैदा करता है। पं. सृष्टि नारायण सत्तार के द्वारा अलि चुड़िहार को समझाते हुए कहते हैं –"कहना, कि अब भी टेम है; बाज आ जाय अपनी हरकत से, नहीं। तो भई हिंदू–मुसलमान का मामला बन जाएगा तो फिर हम नहीं जानते।"[43] बुद्धू और भूरी के भाग जाने के बाद सृष्टि नाराण हिंदू को भडकाते हैं। भूरी के घरवाले बुद्धू को मारने उसके घर जाते हैं, घर पर अल्ली चुडिहार को पाकर उसे बहुत पीटते हैं –"बुधुवा कहाँ है, निकार ओंका भगतराम चीखा 'बुधुवा.... अरे मार सारे का .....बस। फिर तो लाठियाँ थी और अल्ली चुड़िहार का जिस्म। वे लोग तब तक उसे मारते रहे जब तक कि वह धराशायी नहीं हो गया।"[44] अतः अंतर्धर्मियों के प्रेम संबंध सांप्रदायिकता का स्त्रोत बनकर ग्रामांचलों की शांति भंग कर रहे हैं। इसका पता यहाँ चलता है।

4.5.3.3. गाँव के स्कूली बच्चों में सांप्रदायिकता :–

गाँवों में स्कूली बच्चे भी सांप्रदायिक भेदाभेद के शिकार हुए नजर आते हैं। सांप्रदायिकता का जहर गाँव के स्कूली बच्चों में भी फैल गया है। अल्ली चुड़िहार के बेटे को 'शाखा' में नहीं लिया जाता क्योंकि वह मुस्लिम है। पं. रामवृक्ष पांडे का पोता अशोक, बुद्धू को हमेशा परेशान करते रहता है –"इन लोगों के सारे काम उल्टे होते हैं। हम लोग सीधे ढंग से हाथ धोते हैं, ये लोग उल्टे ढंग से। हम लोगों के यहाँ सीधे तवे पर रोटी बनती है, इनके यहाँ उल्टे तवे पर। हम लोग बाल मुंडाते हैं, ये लोग नूनी काटते हैं। सुना नहीं है। हिंदुअन की फलान और मियन की दाढी ....।"[45] स्कूल के बच्चे बुदधू को मुसल्ला, मियाँ, कटुवा कहकर चिढ़ाते हैं, गालियाँ देते हैं। स्कूली बच्चों से तंग किए जाने के कारण परेशान बुद्धू स्कूल छोड देता है। इससे यह

स्पष्ट होता है कि सांप्रदायिकता का जहर गाँव के स्कूली बच्चों को भी मानसिकता को बिगाड रहा हैं। स्कूली माहौल में सांप्रदायिकता जहर चिंता का विषय बन गया है। इसपर लेखक ने बारीकी से चिंतन किया है। इसका पता यहाँ चलता है।

4.5.3.4. धर्मांतरण और सांप्रदायिकता :–

'मुखडा क्या देखे' उपन्यास में धर्मांतरण के कारण भी सांप्रदायिक माहौल उग्र बनता है। पतरस (फादर) तथा खिश्चन मिशनरियों द्वारा विभिन्न लालचोंद्वारा अल्लि चुड़िहार को धर्मांतरण के लिए दबाव डाला जाता है। अल्लि चुड़िहार भी अपने मजहब, धर्म की रक्षा हेतु दूसरे ठिकाने में अपना घर बनाकर मुस्लिमों का संगठन निर्माण करना चाहता है। धर्म को वह अपना प्राण मानता है। आमिषों के बाद भी धर्मांतर करना नहीं चाहता।

रामदेव चमार के मुसलमान बनने से पं. सृष्टि नारायण गुस्सा हो जाते हैं। उन्हें इस धर्मांतरण के पीछे अल्ली चुड़िहार का संदेह आता है, वे बुद्धू को धमकाते हैं –"उ रामदेउवा चमार मुसलमान हो गया है। सत्तार तो हैं नहीं, हमें पूरा बिस्वास है कि उसे तुम्हारे बब्बा ने ही भडकाया होगा। उनसे कह दो कि गाँव में रहना है तो सोच–समझ कर रहें। नहीं तो बात फिर बहुतै बिगड जौएगी। समझे।"[46] धर्मांतरण के कारण भी सांप्रदायिक तनाव निर्माण हो जाता है। हिंदुओं की कट्टरता के कारण धर्म–परिवर्तन करनेवाले दलितों को भी हिंदुत्ववादी लोग धमकाते हैं।

संक्षेप में हम कह सकते हैं 'मुखडा क्या देखे' उपन्यास में अब्दुल बिस्मिल्लाह जी ने बहुसंख्यक हिंदुओं के गाँव में अल्पसंख्यक मुस्लिमों की दीन दशा को सजीवता से स्पष्ट किया है। पं. रामवृक्ष पांडे का अपूर्ण भारत विभाजन से रूष्ट होना, अल्ली चुड़िहार को पं. रामवृक्ष पांडे की बेटी लता के शादी में न जाने से पूर्वग्रह दूषित मानसिकता से पीटना, जब्बार मौलवी का अल्ली चूड़िहार को अपने से हल्का मुसलमान मानना, शब्बीर चुड़िहार द्वारा कल्लू चुड़िहार को बिरादरी से बहिष्कृत मानकर चुनिया की शादी की दावत में खाने से इन्कार करना, जबलपुर में हिंदू–मुस्लिम युवक–युवती के प्रेम–विवाह से दंगें भडकना, पं. नेहरू द्वारा दंगाइतों को शांत करना, स्कूल में अशोकद्वारा बुद्धू को शाखा में न लेना, उसे चिढाना, इससे परेशान बुद्धू का स्कूल छोडना, बुद्धू और भूरी (हिंदू कन्या) का भाग जाना, गाँववालों द्वारा अल्ली चुड़िहार को फिर से पीटना, अल्ली चुड़िहार का हिंदुओं के दहशत से तंग आकर बलापुर छोडकर काम की तालाश में दल्लोपुर जाना और वही

घर बसाना, फादर पतरस द्वारा अल्ली चुड़िहार को धर्मांतरण के लिए लालच देना, अल्ली चुड़िहार का मुस्लिम संगठन बनाना, रामदेव चमार का धर्मांतरण करना, अल्ली चुडिहार का इस धर्मांतरण के पीछे हाथ मानकर पं. सृष्टि नारायण का बुद्धू को धमकाना उपन्यास की आदि घटनायें गाँवों में व्याप्त सांप्रदायिक विद्‌ग्धता को स्पष्ट करती हैं। हिंदू–मुस्लिमों के अलगाववादी भावना के कारण तनाव का माहौल बना रहता है। एक–दूसरे के धर्म की ओर देखने की पूर्व ग्रह दूषित भावना के कारण सांप्रदायिकता धधकने लगती है। इस पर लेखक ने यहाँ चिंतन करके 'सांप्रदायिकता' के कुरूप मुखडे का रहस्योद्‌घाटन किया है।

* निष्कर्ष :–

उपर्युक्त विवेचन से ज्ञात होता है कि भारत विभाजन और सांप्रदायिकता हिंदी साहित्य में एक ऐसा संदर्भ बिंदु है जो स्वातंत्र्योत्तर काल से 20 वीं सदी के अंतिम दशक के उपन्यासों में निरंतर गतिमान है। विवेच्य उपन्यासों में सांप्रदायिकता से विद्‌ग्ध ग्रामांचलों का यथार्थवादी वर्णन किया गया है। वीरेंद्र जैन के 'डूब' (1991), उपन्यास में भारत विभाजन की त्रासदी से प्रभावित लडैई गाँव जीवन में फैलते सांप्रदायिक जहर तथा उससे प्रभावित गाँववालों की मानसिकता का लेखक ने प्रभावी चिंतन किया है। मैत्रेयी पुष्पा के 'इदन्नमम' (1994), उपन्यास में भा.ज.पा. रथयात्रा , बाबरी कांड तथा 'मंडल कमिशन' की घटनाओं से प्रभावित ग्रामांचलों में उभरे असामाजिक तत्त्वों पर लेखिका ने सूक्ष्मता से चिंतन किया है। तथा अब्दुल बिस्मिल्लाह के 'मुखडा क्या देखे' (1996), उपन्यास में धर्म तथा जाति के पूर्वग्रह दूषित मानसिकता से ग्रामांचलों की आत्मा क्षतिग्रस्त हो रही है। धर्मांतरण, अंतर्धर्मिय विवाहों से सांप्रदायिकता को बढावा मिल रहा है जो ग्राम–जीवन में नवीन है।

* समन्वित निष्कर्ष :–

प्रस्तुत विवेचन से स्पष्ट होता है कि 'भारत का बँटवारा' देश के इतिहास की एक महत्त्वपूर्ण राजनीतिक घटना है, जिसने हिंदी साहित्य को भी प्रभावित किया। बँटवारे के पश्चात् उभरी सांप्रदायिकता के कारण बर्बर पाशविकता तथा मानवी मूल्यों में आई गिरावट को स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में लेखकों ने यथार्थवादी वाणी देने का प्रयास किया है। चारों ओर लूट–खसौट, खून, आगजनी, बलात्कार, नारी चित्कार ने नरक का माहौल बनाया। लाखों–करोडों निरपराधियों की निर्मम हत्या, नारी विवशता, शरणार्थियों की समस्या ने भारत के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर

गहरा आघात किया। 'भारत विभाजन' का दर्द स्वातंत्र्योत्तर सांप्रदायिक दंगों का ऊर्जा स्त्रोत बनते आया है।

विगत पचास सालों में भारत में अनेक सांप्रदायिक दंगे हुए। अयोध्या का मंदिर–मस्जिद विवाद, बम्बई बम विस्फोट, कश्मीर के सीमा प्रश्न से निरंतर गतिमान सांप्रदायिक दंगें, गोध्रा हत्याकांड, भारतीय संसद पर हुआ आतंकवादी हमला, अक्षरधाम का हादसा, खलिस्तान की माँग का विद्रोह, वांशिक भेद, आरक्षण–नीति पर उठा सांप्रदायिक बवाल तथा वर्तमान समय 26 नवम्बर,2008 को मुंबई पर हुए आतंकवादी हमलें आदि सांप्रदायिकता दंगों की वजह से भारतीय परिवेश निरंतर विद्‌ग्ध बन रहा है।

'सांप्रदायिकता' के उन्माद के बाद निर्माण अनेक सामाजिक समस्याओं से भारत जूझ रहा है। परिवार विघटन, शरणार्थियों की समस्या, सामाजिक तनाव, धार्मिक कट्‌टरता आदि ने भारत के बुनियादी विकास मार्ग में रोडा अटकाया है।

इस त्रासदी से पूर्णरूप से निजात पाने के लिए हमें व्यापक प्रयास करने जरूरी है जिसमें हिंदू–मुस्लिम सामंजस्य, धर्मों के तुलनात्मक समन्वयकारी तत्त्वों का अध्ययन, मानवता की सभ्यता तथा संस्कृति की शिक्षा, धर्म–निरपेक्ष मूल्यों की वृद्‌धि तथा राष्ट्रीय एकात्मता पर बल, कार्यक्षम तथा प्रशिक्षित पुलिस यंत्रणा, तेज न्याय व्यवस्था, समताधिष्ठित समाज निर्माण आदि रचनात्मक कार्य करके हम इस त्रासदी से निजात पा सकते हैं।

विवेच्य उपन्यासों में 'सांप्रदायिकता' की विद्‌ग्धता से आहत ग्रामांचलों की स्थिति पर रचनाकारों ने गहराई तथा सूक्ष्मता से चिंतन किया है। 'डूब', 'इदन्नमम' और 'मुखडा क्या देखे' आदि उपन्यासों में भारत के सांप्रदायिक परिवेश में विगत पचास सालों में घटित घटनाओं का ब्यौरा देकर गाँवों के खुशिहाल जीवन में उभरे सांप्रदायिकता के उमस भरे माहौल को स्पष्ट किया गया है। भारत के बँटवारे से भडकी सांप्रदायिकता, जातिगत हीन मानसिकता, धर्मांतरण, अंतर्धर्मीय विवाह, धर्मों के प्रति पूर्वग्रह दूषित दृष्टि आदि के कारण विवेच्य ग्रामांचलिक उपन्यासों में चित्रित गाँव प्रभावित होकर एक–दूसरे के खून के प्यासे हो जाते हैं। यह सांप्रदायिक विद्‌ग्धता गाँव की 'राम–राज्य' वाली अस्मिता को क्षतिग्रस्त बना रही है।

संदर्भ–सूचीः–

1. डॉ. प्रमिला अग्रवाल, 'भारत–विभाजन और हिंदी कथा साहित्य 'प्राक्कथन से उद्धृत
2. ज्ञानचंद गुप्ता, 'स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यास और ग्राम चेतना', पृ. क्र. 26
3. प्रदीप देशपांडे, 'फाळणीच्या अंतरंगात', पृ. क्र. 6
4. रामानंद सागर, 'और इन्सान मर गया', पृ. क्र. 76
5. सम्पा. प्रा. सुभाष वारे, 'राष्ट्र सेवा दल पत्रिका', पृ. क्र. 7
6. डॉ. सुभाष दुरूगकर, 'राही मासूम रजा का कथा साहित्य', पृ. क्र. 58
7. डॉ. राम काले, 'व्यापारी मित्र', पृ. क्र. 482
8. प्रदीप देशपांडे, 'धर्मवादाचे राजकारण', पृ. क्र. 13
9. वही, पृ. क्र. 19
10. वही, पृ. क्र. 25
11. रामदरश मिश्र, 'हिंदी उपन्यास के सौ वर्ष', पृ. क्र. 303
12. ले. सूर्यनारायण रणसुभे 'देश विभाजन और हिंदी कथा साहित्य', पृ.क्र. 54
13. शत्रुघ्न प्रसाद, 'हिंदी उपन्यास और भारत विभाजन', पृ. क्र. 108
14. ओम प्रकाश शर्मा, 'पच्चीस उपन्यासः नाटकीयता की निकष पर', पृ. क्र. 99
15. सम्पा. विभूति नारायण राय, कथा–साहित्य के सौ बरस' पृ. क्र. 147
16. डॉ. आदित्य प्रसाद त्रिपाठी, 'औपन्यासिक समीक्षा एवं समीक्षाएँ', पृ.क्र. 160
17. प्रदीप देशपांडे, 'धर्मवादाचे राजकारण' भूमिका से उद्धृत
18. वही,पृ. क्र. 11
19. कृष्णकुमार बिस्वा, 'साठोत्तरी हिंदी उपन्यासों में राजनीतिक चेतना', पृ.क्र. 158
20. मेधा पाटकर, 'पुढारी समाचार पत्र', लेख–महासत्ता भारत–पर्यायी विकासाची कास से उद्धृत, पृ. क्र.8
21. प्रफुल्ल बिडवई, 'लोकमत समाचार पत्र', संपादकीय पृष्ठ से उद्धृत, पृ.क्र.4
22. सम्पा. प्रसाद कुलकर्णी, 'प्रबोधन प्रकाशन ज्योति', पृ. क्र.72
23. डॉ. राधा गिरधारी, 'राजेंद्र यादव के उपन्यासों में व्यक्ति और समाज', पृ. क्र. 112

24. आनंद प्रकाश, 'आधुनिक हिंदी उपन्यास', पृ. क्र. 196
25. डॉ. यादवराव धुमाळ, 'साठोत्तरी हिंदी और मराठी के सामाजिक उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक तुलनात्मक अध्ययन', पृ. क्र.214
26. डॉ. क्षितिज धुमाळ, '20 वीं सदी के अंतिम दशक के उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक अनुशीलन' पृ. क्र. 42
27. सम्पा.विभूति नारायण राय, 'कथा–साहित्य के सौ बरस', पृ. क्र. 140
28. रामदरश मिश्र, 'डूब' किताब के मलपृष्ठ से उद्धृत
29. वीरेंद्र जैन, 'डूब' पृ. क्र. 40
30. वही, पृ. क्र. 33
31. डॉ. क्षितिज धुमाळ, '20 वीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक अनुशीलन', पृ. क्र. 104
32. डॉ. लक्ष्मण पाटील, 'मैत्रेयी पुष्पा का कथा–साहित्य संवेदना के विविध आयाम', पृ. क्र. 472
33. मैत्रेयी पुष्पा, 'इदन्नमम', पृ. क्र. 254
34. वही, पृ. क्र. 254
35. वही, पृ. क्र. 258
36. वही, पृ. क्र. 261
37. डॉ. क्षितिज धुमाळ, '20 वीं सदी के अंतिम दशक के हिंदी उपन्यासों का प्रवृत्तिमूलक अनुशीलन', पृ. क्र. 106
38. वही, 107
39. अब्दुल बिस्मिल्लाह, 'मुखडा क्या देखे', पृ. क्र. 16
40. वही, पृ. क्र. 18
41. वही, पृ. क्र. 109–110
42. वही, पृ. क्र. 86
43. वही, पृ. क्र. 141
44. वही, पृ. क्र. पृ. क्र. 157
45. वही, पृ. क्र. 121–122
46. वही, पृ. क्र. 213